पैंतीसबोल विवरण

लेखक—

जंगम युगप्रधान भट्टारक पूज्येश्वर जैनाचार्य

श्री श्री १००८ श्रीमज्जिन हरिसागर

सूरीश्वरजी के अन्तेवासी—

मुनि श्री कान्तिसागरजी

प्रकाशक—

बीकानेर निवासी श्रेष्ठिवर्य श्रीयुत

भैरोंदानजी हाकिम कोठारी

मूल्य अमूल्य तत्त्व ग्रहण

सुखसागर ज्ञान बिंदु नं० ३९।

ॐ नमो गुरु देवाय

सिद्धान्तवेदी-सर्वतंत्र-स्वतंत्र-आबालब्रह्मचारी
परमशान्त-योगेन्द्रचूडामणि-शासनसम्राट
विश्वपूज्य सूरीचक्रचक्रवर्ती-भट्टारक
शिरोमणि-परमगुरुदेव-खरतर-
गच्छाधिराज श्री श्री
१००८ श्री श्रीमज्जिन हरीसागर
सूरीश्वरजी महाराज साहब की सेवा में
सादर सप्रेम सविनय

समर्पण

आप किया उपकार, मैं बदला क्या देसकूं ?
चरण शरण सुखकार, जीवन अर्पित आपके॥

शिष्याणु-
'कांति'

श्री बेवल जीवनानन्द प्रेस, कोट गेट बीकानेर, में मुद्रित।

दो शब्द

श्री जैन तत्त्वज्ञान के अनन्त दिव्य भण्डार को खोलने के लिए पूर्वाचार्यों ने कुछ कुंजियें बनाई हैं। "पैंतीस बोल"--भी एक दिव्य कुंजी है। जिससे कि विवेकी आत्मा सहज में तत्त्वज्ञान के दिव्य भण्डार को खोल सकते हैं।

जड़-चेतनात्मक संसार में छोड़ने योग्य, जानने योग्य, और ग्रहण करने योग्य ऐसे तीनों तरह के भाव भरे पड़े हैं। जैन तत्त्वज्ञान से ही उनका यथार्थ ज्ञान होता है। कल्याण-मार्ग के अनुयायियों को जैनतत्त्वज्ञान जानना आवश्यक ही नहीं अत्यावश्यक है। उसको जानने के लिये उसकी कुंजी को जानना सर्वतोभावेन जरूरी है।

इस छोटी सी पुस्तिका में उसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये जैनाचार्य खरतरगच्छाधिराज पूज्येश्वर जंगमयुग-प्रधान भट्टारकशिरोमणि परमशान्तस्वभावी स्वनामधन्य गुरु-देव श्री श्री १००८ श्रीमज्जिन हरिसागर सूरीश्वरजी महाराज

'पैंतीस बोल विवरण' को-जैन तत्त्व के गंभीर भावों के विवेचन को सरलता से लिख कर पाठकों का बड़ा उपकार किया है।

महाराज की मातृभाषा मारवाड़ी होने से, एवं बाल्यावस्था में ही तेरह पंथियों में दीक्षा ले लेने से हिंदी भाषा इतनी मंजी हुई न होना स्वाभाविक ही है फिर भी उस भ्रान्त पंथ को छोड़ देने से पूज्येश्वर आचार्यदेव की सत्संगति एवं शिक्षा से हिंदी भाषा में भी आपकी योग्यता उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त हो रही है।

इस पैंतीस बोल विवरण में सावधानी होते हुए भी ऊपर लिखे कारणों से भाषा की दृष्टि से कहीं २ शिथिलता आगई है। जो प्रथमारम्भ में क्षम्य है।

इस विवरण को पढ़कर आबाल वृद्ध नर-नारी यथोचित लाभ उठा सकेंगे यह बात इसको भली प्रकार पढ़ने पर ही जानी जा सकती है। अतः पाठकगण इसको ध्यानपूर्वक पढ़ने की चेष्टा करें।

इसको श्री हरिसागर जैन पुस्तकालय के द्वारा प्रकाशित कराने के लिये बीकानेर निवासी गण्य-मान्य श्रीमान् सेठ भैरोंदानजी साहब हाकिम- कोठारी की अखण्ड सौभाग्यवती श्रीमती धर्मपत्नीजी ने जो उदारता दिखाई है वह सराहनीय

है। इस ज्ञान-प्रकाशन एवं निस्वार्थ धर्म प्रचार के लिये आप भूरि २ धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रेसमैनों की असावधानी एवं संशोधन सम्बन्धी त्रुटियां यदि कहीं रह गई हों तो पण्डित पाठक ध्यानपूर्वक पढ़ने पढ़ाने का प्रयत्न करें।

प्रार्थी:-

मूलचन्द नाहटा

(बीकानेर)

शुद्धाशुद्धिपत्र

प्रस्तुत पुस्तक में अर्थ में गड़बड़ी पैदा करने-वाली कई अशुद्धियां रह गई हैं। दो एक स्थान पर पाठ छूट गया है। कहीं पर संशोधन कर देने पर भी काना मात्रा आदि उठ गई हैं। इस प्रकार की जो स्खलनायें नजर आई हैं वे निम्नाङ्कित हैं एवं और भी होंगी उन्हें पाठक स्वयं सुधार कर पढ़ें :--

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१७	पतंग्या	पतंगिया
७	२	धनवायु	घनवायु
७	४	पते	पत्ते
७	१४	करते हो	करता हो
१६	३	अवधिज्ञान-२	अवधिज्ञान-३
२०	४	वासतविक तत्त्व	वास्तविक तत्त्व
३८	१	इन ४	इन ४८
[illegible]	२	होने	होने से

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४२	१५	८ नमस्कार पुण्य	८- कायपुण्य- काया को परोप- कार में लगाना ९ नमस्कार पुण्य
४८	६	परिमाण करने से	त्याग करने से
५३	१५	असुर कुमार- १	असुर कुमार- २
६०	५	संपन शुक्ले- श्यो भाविन्नर;	संपन्नः शुक्ले- श्यो भवेन्नरः
६२	७	आलध्यान	आर्त्तध्यान
८८	१४	क्षायोग-२ क्षायिक शमिक	क्षायिक २ क्षायोपशमिक

अर्हंनमः

॥ पैंतीस बोल का थोकड़ा ॥

पहिले बोले गति चार

नरक गति ॥ १ ॥ तिर्यञ्च गति ॥ २ ॥ मनुष्य गति ॥ ३ ॥ देव गति ॥ ४ ॥

गति किसको कहते हैं? नाम कर्म के उदय से जीव की पर्याय विशेष को गति कहते हैं।

१. महान पाप करने से जो जीवात्मा नरक में जाता है, उसे नरक गति कहते हैं। नरक गति में दुःख बहुत सहन करना पड़ता है।

सात नरकों के नाम

घमा ॥१॥ वंशा ॥२॥ शेला ॥३॥ अंजणा ॥४॥ रिट्ठा ॥ ५ ॥ मघा ॥ ६ ॥ माघवती ॥ ७ ॥

सात नरकों के गोत्र

रत्न प्रभा ॥१॥ शर्करा प्रभा ॥ २ ॥ वालु का प्रभा ॥३॥ पंक प्रभा ॥४॥ धूम प्रभा ॥ ५ ॥ तमः प्रभा ॥६॥ महातमःप्रभा ॥७॥

किस कारण से जीवात्मा नरक में जाता है।

महान आरम्भ करने से, परिग्रह में अत्यन्त मूर्छा रखने से, पंचेन्द्रिय जीव की घात करने से किये हुए उपकार को भूल जाने से, उत्सूत्र प्ररूपण करने से इत्यादि अनेक कारणों से जीवात्मा नरक में जाता है।

किस कारण से जीवात्मा तिर्यञ्च में जाता है?

गूढ हृदय वाला, अर्थात् जिसके दिल की बात कोई न जान सके ऐसा। शठ—जिसकी जबान मीठी

हो पर दिल में जहर भरा है ऐसा। सशल्य—अर्थात् महत्व कम होजाने के भय से प्रथम किये हुये पाप कर्मों की आलोचना गुरूके पास न करने वाला। इत्यादि अनेक कारणों से जीवात्मा तिर्यञ्च गति में जाता है।

किस कारण से जीवात्मा मनुष्य होता है।

अल्प कषायी, दान में रुचि वाला, मध्यम गुणों वाला अर्थात् मनुष्यायु बन्ध के योग्य क्षमा, मृदुता आदि गुणोंवाला जीव मनुष्य की आयु को बांधता है। उत्तम गुणोंवाला देवायु को, मध्यम गुणोंवाला मनुष्यायु को और अधम गुणोंवाला नरकायु को बांधता है।

किस कारण से जीवात्मा देव गति में जाता है।

१ पंच महाव्रत धारी साधु महाराज, देशविरत श्रावक, अविरत सम्यग्दृष्टि मनुष्य अथवा तिर्यंच।

२ बाल तपस्वी अर्थात् आत्मस्वरूप को न जानकार अज्ञान पूर्वक काय क्लेश आदि तप करने वाला मिथ्या दृष्टि।

३ अकाम निर्जरा अर्थात् इच्छा न होते हुए भी जिसके कर्म की निर्जरा हुई है ऐसा जीव तात्पर्य यह है कि अज्ञान से भूख, प्यास, सरदी, गरमी को सहन करना, स्त्री की अप्राप्ति से शील को धारण करना इत्यादि बाह्य शुभानुष्ठानों से जो कर्म की निर्जरा होती है उसे अकाम निर्जरा कहते है, इत्यादि अनेक कारणों से जीवात्मा देवगति में जाता है।

दूजे बोले जाति ५

एकेन्द्रिय जाति १ बेइन्द्रिय जाति २ तेइन्द्रिय जाति ३ चउरिन्द्रिय जाति ४ पंचेन्द्रिय जाति ५।

नाम कर्म के उदय से जीव की पर्याय विशेष को जाति कहते हैं।

१ जिसके सिर्फ शरीर ही हो उसको एकेन्द्रिय कहते हैं।

२. जिसके शरीर और मुंह हो, उसको बेइन्द्रिय कहते हैं।

३. जिसके शरीर, मुँह, नाक हो उसको तेइन्द्रिय कहते हैं।

४. जिसके शरीर मुँह, नाक, और आंखें हो उसको चउरिन्द्रिय कहते हैं।

५. जिसके शरीर मुँह, नाक, आंख और कान हों उसको पंचेन्द्रिय कहते हैं।

१ अनाज, वृक्ष, वायु, अग्नि जल आदि में एकेन्द्रिय जाति के जीव हैं।

२ शंख, कोड़ी, सीप, लट, कीड़ा अलसिया कृमि, (चूरणिया) आदि बेइन्द्रिय जाति के जीव कहलाते हैं।

३ जूं, लीख, चांचड़, माकड़, कीड़ा, कुंथुआ, मकोडा, कानखजूरा आदि तेइन्द्रिय जाति के जीव कहलाते हैं।

४ माखी, डांस, मच्छर, भमरा, टीडी, पतंग्या, कसारी आदि चउरिन्द्रिय जाति के जीव कहलाते हैं

५ गाय, भैंस, बैल, हाथी, घोड़ा, मनुष्य आदि पंचेन्द्रिय जाति के जीव कहलाते हैं।

स्थिति विधान

	जघन्य	उत्कृष्ट
१ एकेन्द्रिय का आयुष्य	जघन्य अंतर्मूहूर्त	उत्कृष्ट। २२ ह०वर्ष
२ बेइन्द्रिय का आ०	,,	१२ वर्ष
३ तेइन्द्रिय का १	,,	४९ दिन का
४ चउरिन्द्रिय का	,,	६ महीना का
१-५ तिर्यंच पंचेन्द्रिय का	,,	तीन पल्योपम का
१-५ मनुष्य पंचेन्द्रिय का	,,	तीन पल्योपम का

तीजे बोले काया छै

पृथ्वीकाय १ अपकाय २ तेउकाय ३ वाउकाय ४ वनस्पतिकाय ५ त्रसकाय ६

१ मिट्टी, हींगलु, हड़ताल, भोडल, पत्थर, हीरा, पन्ना आदि पृथ्वीकाय में समावेश होते हैं।

२ बरसात का पानी, समुद्र का पानी, ओस का पानी, तालाब का पानी, कुवे का पानी, बावड़ी का पानी, धूवर का पानी आदि अप्काय में समावेश होते हैं।

३ अंगार की अग्नि, ज्वाला की अग्नि, बिजली की अग्नि, आदि तेउकाय में समावेश होते हैं।

४ उद्भ्रामक वायु, मन्दवायु, उत्कलितवायु, मण्डलीकवायु, गुंजवायु, घनवायु, तनवायु, आदि वायुकाय में समावेश होते हैं।

५ फल, फूल, पत्ते, वृक्ष आदि वनस्पति काय में समावेश होते हैं। वनस्पतिकाय २ प्रकार का है। एक प्रत्येक वनस्पतिकाय, दूसरी साधारण वनस्पतिकाय, एक शरीर में एक ही जीव हो उसको प्रत्येक कहते हैं जैसे कि बड, पीपल, आम, अंगूर आदि एक शरीर में अनेक जीव हो उसको साधारण वनस्पति कहते हैं, जैसे कि आलू, रतालू, मूला, गाजर, सकरकन्द, प्याज, लहसन, लीलण, फूलण आदि वनस्पतिकाय में समावेश होते हैं।

६ जिस जीवात्मा में घूमने फिरने की शक्ति हो सुख और दुख का अनुभव करते हो। उसको त्रसकाय कहते हैं।

स्थिति विधान

१ पृथ्वीकाय का आयुष्य	जघन्य अंतर्मूहूर्त	उत्कृष्ट २२हं०वर्ष
२ अपकाय का ,,	,,	७ हजार वर्ष
३ तेउकाय का ,,	,,	तीन दिन रात
४ वायुकाय का ,,	,,	तीन हजार वर्ष
५ वनस्पतिकाय का ,,	,,	दश हजार वर्ष
६ त्रसकाय का ,,	,,	३३ सागरोपम

एक मुहूर्त में एक जीव उत्कृष्ट कितने भव करता है ?

पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, एक मुहूर्त में १२८२४ भव करते हैं।

बादर वनस्पतिकाय एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ३२००० भव करते हैं।

सूक्ष्म वनस्पति काय एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ६५५३६ भव करते हैं।

बेइन्द्रिय एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ८० भव करते हैं।

तेइन्द्रिय एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ६० भव करते हैं।

चउरिन्द्रिय एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ४० भव करते हैं

असन्नी पंचेन्द्रिय एक मूहूर्त में उत्कृष्ट २४ भव करते हैं।

सन्नी पंचेन्द्रिय एक मूहूर्त में उत्कृष्ट १ भव करते हैं।

छः काय का विशेष स्वरूप

इन्द थावरकाय १ बंभ थावरकाय २ सिप्पी थावरकाय ३ सुमति थावरकाय ४ पयावच्च थावरकाय ५ जंगमकाय ६

१ पृथ्वीकाय का इन्द्रदेवता मालिक है इसलिये इसको इन्द्रथावरकाय कहते हैं।

२ अपकाय का ब्रह्म देवता मालिक है इसलिये इसको बम्भ थावरकाय कहते हैं।

३ तेउकाय का शिल्पी नामक देवता मालिक है इसलिये इसको सिप्पी थावरकाय कहते हैं।

४ वायुकाय का सुमति नामक देवता मालिक है इसलिये इसको सुमति थावरकाय कहते हैं।

५ वनस्पतिकाय का प्रजापति मालिक है इसलिये इसको पयावच्च थावरकाय कहते हैं।

६ त्रसकाय का जंगमनामा देवता मालिक है इसलिये इसको जंगमकाय कहते हैं।

चौथे बोले इन्द्रिय ५

श्रोत्र इन्द्रिय १ चक्षु इन्द्रिय २ घ्राणेन्द्रिय ३ रसन इन्द्रिय ४ स्पर्शन इन्द्रिय ५

जीव तीन लोक के ऐश्वर्य से संपन्न है इसलिये इसे इन्द्र कहते हैं। उस इन्द्र (जीव) के चिह्न को इन्द्रिय कहते हैं। अर्थात् इन्द्रिय से जीव पहिचाना जाता है।

१ कान को श्रोत्र इन्द्रिय कहते हैं। इससे सब प्रकार के शब्द सुनाई देते हैं।

२ आंख को चक्षुइन्द्रिय कहते हैं इससे सफेद, लाल आदि रंग दिखाई देते हैं।

३ नाकको घ्राणेन्द्रिय कहतेहैं इससे सुगन्ध, तथा दुर्गन्ध मालूम होती है।

४ जिह्वा को रसनेन्द्रिय कहते हैं इससे मीठा, खट्टा आदि मालूम होता है।

५ शरीर को स्पर्शन इन्द्रिय कहते हैं। जिससे छूकर ज्ञान होता है तथा ठण्ढा, गर्म, मुलायम और खरदरा आदि का ज्ञान होता है।

पांचवे बोले पर्याप्ति छ।

आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इन्द्रिय पर्याप्ति ३ श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति ४ भाषा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६

पर्याप्ति किसको कहते हैं?

आहार शरीर आदि वर्गणा के परमाणुओं को शरीर इन्द्रिय आदि रूप में परिणमाने की शक्ति की पूर्णता को पर्याप्ति कहते हैं।

१ आहारिक वर्गणा को ग्रहण कर उसका रस बनाने की जो शक्ति है उसको आहार पर्याप्ति कहते हैं।

२ रस के पश्चात् खून, मांस, मेद, मज्जा, अस्थि और वीर्य इस प्रकार सात धातुओं को बनाकर शरीर को बनाने वाली शक्ति को शरीर पर्याप्ति कहते हैं।

३ धातुओं से स्पर्श और रसन आदि द्रव्येन्द्रियों को बनाने की जो शक्ति है उसे इन्द्रिय पर्याप्ति कहते हैं।

४ श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गल वर्गणाओं का ग्रहण कर उन्हें श्वासोच्छ्वास के रूप में बदलने की शक्ति को श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति कहते हैं।

५ भाषा के योग्य पुद्गल-वर्गणाओं का ग्रहण कर उन्हें भाषा के रूप में बदलने की शक्ति को भाषा पर्याप्ति कहते हैं।

६ मन के योग्य पुद्गल-वर्गणाओं का ग्रहण कर उन्हें मन के रूप में परिणत करने की शक्ति को मनःपर्याप्ति कहते हैं।

छट्ठे बोले प्राण १०।

श्रोत्रेन्द्रिय बलप्राण १ चक्षुरिन्द्रिय बलप्राण २ घ्राणेन्द्रिय बलप्राण ३ रसनेन्द्रिय बलप्राण ४ स्पर्शनेन्द्रिय बलप्राण ५ मनोबलप्राण ६ वचन बलप्राण ७ काय बलप्राण ८ सासोसास बलप्राण ९ आयुष्य बलप्राण १०

प्राण किसको कहते हैं।

जिसके संयोग से यह जीव जीवन अवस्था को प्राप्त हो और वियोग से मरण अवस्था को प्राप्त हो उसको प्राण कहते हैं।

सातवें बोले शरीर ५ ।

औदारिक शरीर १ वैक्रिय शरीर २ आहारक शरीर ३ तैजस शरीर ४ कार्मण शरीर ५

शरीर किसको कहते हैं ?

जिसमें प्रतिक्षण शीर्ण जीर्ण होने का धर्म हो तथा शरीर नाम कर्म के उदय से उत्पन्न होता हो उसे शरीर कहते हैं।

औदारिक शरीर किसको कहते हैं?

१ मनुष्य तिर्यञ्च के स्थूल शरीर को तथा हाड़, मांस, लोही, राद, जिसमें हो उसको औदारिक शरीर कहते हैं। इसका स्वभाव गलना सड़ना विध्वंश होना है।

वैक्रिय शरीर किसको कहते हैं ?

२ जिसमें छोटे बड़े एक अनेक आदि नाना प्रकार के रूप बनाने की शक्ति हो, तथा देव और नारकी के शरीर को वैक्रिय शरीर कहते हैं। अथवा जिसमें हाड़ लोही राद नहीं हो, तथा मरने के बाद कपूर की तरह बिखर जाय, उसको वैक्रिय शरीर कहते हैं।

आहारक शरीर किसको कहते हैं?

सूक्ष्म अर्थों में शंका उत्पन्न होने पर प्रमत्त गुणस्थानवर्त्ती आहारक लब्धिधारी श्रुतकेवली-पूर्वधारी मुनि विशेष तया विशुद्ध पुद्गलों से एक हाथ का अथवा मूंडे हाथ का पुतला आत्म प्रदेशों से व्याप्त करके वर्तमान तीर्थंकर केवली भगवान के पास भेजते हैं और शंसय निराकरण करते हैं। किसी से भी नहीं रुकने वाले आत्म प्रदेश व्याप्त उस पुतले को आहारक शरीर कहते हैं।

तैजस शरीर किसको कहते हैं ?

४ जो ग्रहण किये हुये आहार को पचावे उसको तैजस शरीर कहते हैं।

कार्मण शरीर किसको कहते हैं

५ ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्मों के समूह को कार्मण शरीर कहते हैं। संसारी जिव के तैजस और कार्मण शरीर हर समय साथ ही रहते हैं।

आठवें बोले जोग(योग) १५

४ चार मनोयोग। ४ चार वचनयोग। ७ सात काययोग।

सत्यमनोयोग १ असत्य मनोयोग २ मिश्रमनोयोग ३ व्यवहार मनोयोग ४ सत्यभाषा ५ असत्य भाषा ६ मिश्रभाषा ७ व्यवहारभाषा ८

औदारिक ९ औदारिक मिश्र १० वैक्रिय ११ वैक्रिय मिश्र १२ आहारक १३ आहारक मिश्र १४ कार्मण १५

योग किसको कहते हैं ?

मन, वचन, काया के व्यापार से होने वाला जो आत्मा का परिणाम है, उसको योग कहते हैं। योग के २ भेद होते हैं-१ भावयोग २ द्रव्ययोग

भावयोग किसको कहते हैं

पुद्गल विपाकी शरीर और अंगोपांग नाम कर्म के उदय से मनोवर्गणा, वचनवर्गणा, कायवर्गणा, के अवलम्बन से कर्मनोकर्म को ग्रहण करने की जीव की शक्ति विशेष को भाव योग कहते हैं।

द्रव्ययोग किसको कहते हैं?

इसी भावयोग के निमित्त से आत्म प्रदेश के परिस्पन्दन (चंचल होने) को द्रव्य योग कहते हैं।

१ जिस प्रकार देखा सुना हो उसी तरह उस वस्तु का या तत्व का विचार करना सत्यमनोयोग है

२ जिस प्रकार देखा, सुना हो उसी तरह उस वस्तु का या तत्व का विपरीत या मिथ्या विचारना असत्य मनोयोग है।

३ कुछ सत्य और कुछ असत्य विचार करना मिश्र मनोयोग है।

४ जो सत्य भी नहीं हो और असत्य भी नहीं हो ऐसा विचार करना व्यवहार मनोयोग है।

५ जैसा देखा हो या सुना हो वैसा ही विचार करके कहना सत्य वचनयोग है।

६ सत्य बात न कहकर के झूठ बोलना असत्य वचनयोग है।

७ कुछ सच और कुछ झूठ का बोलना मिश्र वचनयोग है।

८ जो सच भी नहीं हो और झूठ भी नहीं हो, इस प्रकार बोलना व्यवहार वचनयोग है। जैसे कि घट्टी पीसी जाती है परन्तु अनाज पीसा जाता है। शहर आगया, किन्तु चलने वाला व्यक्ति ही आया है। परनाला गिरता है, लेकिन

पाणी गिरता है। इस प्रकार के शब्दों का उच्चारण करना व्यवहार भाषा है।

६ औदारिक शरीर से जो योग होता है उसे औदारिक काययोग कहते हैं।

१० मनुष्य और तिर्यंच की उत्पत्ति के समय औदारिक शरीर बनाने में जो योग होता है उसे औदारिक मिश्रकाय योग कहते हैं।

११ वैक्रिय शरीर से जो योग होता है उसे वैक्रिय काययोग कहते हैं।

१२ देवता और नारकी के उत्पत्ति के समय वैक्रिय शरीर के बनाने में जो योग होता है, उसे वैक्रिय मिश्रकाय योग कहते हैं।

१३ आहारक शरीर से जो क्रिया होती है, उसे आहारक काययोग कहते हैं।

१४ आहारक शरीर के बनाने में साधुओं को जो क्रिया करनी पड़ती है, उसे आहारक मिश्र काययोग कहते हैं।

१५ जिससे कर्मपरमाणुओं के आने की क्रिया होती है उसे कार्मण काययोग कहते हैं।

नवें बोले उपयोग १२

पांच ज्ञान। तीन अज्ञान। चार दर्शन। ज्ञान५ मतिज्ञान १ श्रुतज्ञान २ अवधिज्ञान ३ मनःपर्यव ज्ञान ४ केवल ज्ञान ५ अज्ञान ३ मति अज्ञान १ श्रुत अज्ञान २ विभंग ज्ञान ३ दर्शन ४ चक्षुदर्शन १ अचक्षुदर्शन २ अवधिदर्शन ३ केवलदर्शन ४

उपयोग किसको कहते हैं

सामान्य विशेष रूप से वस्तु का जानना, उसे उपयोग कहते हैं ?

१ इन्द्रिय और मन के द्वारा जो बात जानी जाती है उसे मतिज्ञान कहते हैं।

२ शास्त्रों का पठन पाठन करने से जो ज्ञान होता है उसे श्रुतज्ञान कहते हैं।

३ इन्द्रियों की सहायता के बिना जो ज्ञान होता है उसे अवधिज्ञान कहते हैं।

४ मनुष्य और तिर्यंच के विचारों को इन्द्रियों की सहायता के बिना जानना उसे मनःपर्यव ज्ञान कहते हैं।

५ प्रत्येक जीवात्मा के भावों को जानना रूपी तथा अरूपी के पदार्थों का ज्ञान होना उसे केवल ज्ञान कहते हैं।

६ मिथ्यात्व सहित जीवात्मा वस्तु के वास्तविक तत्वका निरूपण न करके मति ज्ञान से विपरीत चलता है। उसे मति अज्ञान कहते हैं।

७ मिथ्यात्व सहित जीवात्मा वस्तु के वास्तविक तत्व को नहीं जानता है श्रुतज्ञान से विपरीत चलता है उसे श्रुतअज्ञान कहते हैं।

८ मिथ्यात्व सहित जीवात्मा अवधि ज्ञान से विपरीत चलता है। उसे विभङ्ग ज्ञान कहते हैं।

९ चक्षु द्वारा जो ज्ञान होता है अर्थात् देखना उसे चक्षु दर्शन कहते हैं।

१० अचक्षु-अर्थात् विना आंख के अन्य चार इन्द्रियों से जो ज्ञान होता है उसे अचक्षु दर्शन कहते हैं

११ अमुक हद तक रूपी और अरूपी के वस्तु का ज्ञान होना अवधि दर्शन कहलाता है।

१२ रूपी और अरूपी पदार्थों का ज्ञान होना केवल दर्शन कहलाता है।

दशवें बोले कर्म ८

ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयु ५ नाम ६ गोत्र ७ अन्तराय ८

कर्म किसको कहते हैं?

जीव के राग द्वेषादिक परिणामों के निमित्त से कार्मण वर्गणा रूप पुद्गल स्कन्ध जीव के साथ बन्धन को प्राप्त होते हैं उनको कर्म कहते हैं। कर्म दो प्रकार के होते हैं एक भाव कर्म एक द्रव्य कर्म भाव कर्म के जरिये से द्रव्य कर्म पैदा होते हैं जैसे कि क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष इन कारणों से द्रव्य कर्म आते हैं।

द्रव्य कर्म किसको कहते हैं

सर्वत्र लोक में कार्मण परमाणु व्याप्त रहते हैं उन्हीं को द्रव्य कर्म कहते हैं। वही कार्माण परमाणु जीवात्मा को आच्छादित करने पर उनको द्रव्य कर्म कहते हैं

ज्ञानावरणीय कर्म—

१— आँख के ऊपर पट्टी के सदृश्य माना गया है। जैसे कि आँख के ऊपर पट्टी बान्धने से दिखना बन्ध हो जाता है उसी तरह ज्ञान के ऊपर कार्मण परमाणु आच्छादित हो जाते हैं। उसी को ज्ञानवरणीय कर्म कहते हैं।

दर्शनावरणीय कर्म-

२— पोल-अर्थात् दरवाजा के रक्षक की उपमा दी गई है। जैसे कि कोई मनुष्य मकान के भीतर प्रवेश करने की इच्छा रखता हुआ भी उस रक्षक की आज्ञा के बिना अन्दर नहीं जा सकता। उसी प्रकार चक्षु के द्वारा बहुत दूर की वस्तु देखने की इच्छा होने पर भी दर्शनावरणीय कर्म के जरिये से देख नहीं सकता उसे दर्शनावरणीय कर्म कहते हैं।

वेदनीय कर्म

३— खड्ग की धारा के ऊपर शहद लगे हुये की उपमा दी गई है वेदनीय कर्म दो प्रकार के

है। एक साता वेदनीय कर्म १ दूसरा असाता वेदनीय कर्म २। शस्त्र के ऊपर लगे हुये शहत को चाटने से मिठास आता है किन्तु अन्त में शस्त्र की धारा के जरिये से जिह्वा कट जाती है। उसी प्रकार संसारिक सुखों को भोगते हुये बहुत ही आनन्द आता है किन्तु अन्त में विपाक उदय आने पर बहुत कष्ट भोगना पड़ता है। उसीको साता वेदनीय कर्म कहते हैं। शरीर में तरह २ के रोगों का पैदा होना। पुत्र, स्त्री, तथा द्रव्य की अप्राप्ति से दुःख होना उसीको असाता वेदनीय कर्म कहते हैं।

मोहनीय कर्म

४— मद्य-अर्थात् दारू की उपमा दी गई है। मद्य का नशा करने पर मनुष्य को कुछ भी ज्ञान नहीं रहता है। उसी प्रकार राग, द्वेष मोह आदि में फंसे हुये जीवात्मा को आत्मा के स्वभाव का ज्ञान नहीं रहता।

आयुष्य कर्म

५ कारागृह (जेल के) समान माना गया है जैसे न्यायधीश (जज) अपराधी को उसके अपराध के अनुसार अमूक काल तक जेल में डालता है और अपराधी चाहता भी है कि मैं जेल से मुक्त हो जाऊं किन्तु पूर्ण अवधि हुये बिना जा नहीं सकता। इसी प्रकार नरकादि गतियों में जीवात्मा की रहने की इच्छा न होते हुये भी स्थिति पूर्ण किये बिना निकल नहीं सकता।

नाम कर्म

६ चित्रकार के समान है। जैसे चित्रकार अनेक प्रकार के मनुष्य, हाथी, सिंह, गाय, मयूर आदि को चित्रित करता है ऐसे ही नाम कर्म नरक, तिर्यंच, मनुष्य, आदि गति में जाने के लिये नाम को चित्रित करता है।

गोत्र कर्म

७ कुंभार के सदृश माना गया है वह दो प्रकार का है एक उच्च गोत्र, दूसरा नीच गोत्र। जैसे

कुंभार कुछ ऐसे घड़ों को बनाता है जो अक्षत चन्दन आदि से पूजे जाते हैं । कुछ ऐसे घड़े बानता है जिनमें मद्य डाला जाता है। जिस कर्म के उदय से जीव उत्तम कुल में जन्म लेता है, वह उच्च गोत्र कहलाता है जिस कर्म के उदय से जीव नीच कुल में जन्म लेता है वह नीच गोत्र कहलाता है। उच्च कुल में, इक्ष्वाकु वंश, हरिवंश, चन्द्र वंश आदि। नीच कुल में भिक्षुक, कसाई, मद्य वेचने वाला आदि मानना चाहिये ।

अन्तराय कर्म

राजा के भंडारी के सदृश माना गया है। कोई याचक राजा के पास याचना करता है, उसके वचन को स्वीकार करके भंडारी को आज्ञा देता है, कि इतनी चीज की इसको आवश्यकता है, इसलिये देदो। राजा के चले जाने पर भंडारी इन्कार कर देता है याचक लौट जाता है। राजा की इच्छा होने पर भी भंडारी ने सफल नहीं होने दिया। इसी प्रकार जीव राजा है, दान आदि करने

की उसकी इच्छा हैं पर अन्तराय कर्म इच्छा को सफल नहीं होने देता।

ग्यारहवें बोले गुणठाणा १४

१ मिथ्यात्व गुणस्थान २ सास्वादान गु० ३ मिश्र गु. ४ अविरति सम्यग्दृष्टि गु. ५ देशविरति श्रावक गु. ६ प्रमत्त संयम गु. ७ अप्रमत्त संयम गु. ८ निवृत्ति करण गु. ९ अनिवृत्ति करण गु. १० सूक्ष्म सम्पराय गु. ११ उपशान्त मोह गु. १२ क्षीण मोह गु. १३ सयोगी केवली गु. १४ अयोगी केवली गुणस्थान।

गुणस्थान किसको कहते हैं?

मोह और योग के निमित्त से सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चरित्र रूप आत्मा के गुणों की तारतम्य रूप (हीनाधिकता रूप) अवस्था को गुणठाणा कहते हैं।

प्रश्न— मिथ्यात्वी जीव के स्वरूप विशेष को ... कैसे कह सकते हैं? क्योंकि जब उसकी

दृष्टि मिथ्या (अयथार्थ) है तब वह गुणों का ठिकाना कैसे हो सकता है ?

उत्तर— यद्यपि मिथ्यात्वी की दृष्टि सर्वथा यथार्थ नहीं होती, तथापि वह किसी अंश में यथार्थ भी होती है। क्योंकि मिथ्यात्वी जीव भी मनुष्य, पशु, पक्षी आदि को मनुष्य, पशु, पक्षी आदि रूप से जानता तथा मानता है। इसलिये उसके स्वरूप विशेष को गुणस्थान कहा है। जिस प्रकार सघन बादलों का आवरण होने पर भी सूर्य की प्रभा सर्वथा नहीं छिपती किन्तु कुछ न कुछ खुली रहती ही है। जिससे कि दिन रात का विभाग किया जा सके। इसी प्रकार मिथ्यात्व मोहनीय कर्म का प्रबल उदय होने पर भी जीव का दृष्टि गुण सर्वथा आवृत नहीं होता। अतएव किसी न किसी अंश में मिथ्यात्वी की दृष्टि भी यथार्थ होती है। वह गुण स्थानक है।

मिथ्या दृष्टि गुण स्थान

जो चीज जैसी है उसे वैसी न मानकर उल्टी श्रद्धा रखना उसे मिथ्यादृष्टि कहते हैं। जैसे

धतूरे के बीज को खाने वाला मनुष्य सफेद चीज को भी पीली देखता है और मानता है। इसी प्रकार मिथ्यात्वी जीव भी जो देव, गुरु, और धर्म के लक्षणों से रहित हैं उनको देव गुरु और धर्म मानता है।

सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थान–

अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय से सम्यक्त्व को छोड़ मिथ्यात्व की ओर झुकाने वाला जीव जबतक मिथ्यात्व को नहीं पाता तबतक– अर्थात् जघन्य १ समय और उत्कृष्ट छः आवलिकापर्यन्त सासादन सम्यग्दृष्टि कहाता है। खांड मिश्रित श्रीखंड का भोजन करने के पश्चात् उलटी होने पर भी उसका असर जरूर रहता है। उसी प्रकार सम्यक्त्व छूटने पर भी उस सम्यक्त्व के परिणाम कुछ अंश में रहते हैं।

प्रश्न— इस से क्या फल की प्राप्ति होती है?

उत्तर--- कृष्ण पक्षी का शुक्ल पक्षी हो जाता है। अधिक से अधिक अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल तक ही संसार में घूमना बाकी रहता है, जैसे कि कोई मनुष्य क्रोड़ रुपैये का कर्जदार है। उसने निान्नणवें लाख निन्नाणवें हजार नवसो और साढा निन्नाणवें रुपैये दे दिये शिर्फ आधा रुपैया बाकी रहा। उसी प्रकार अर्द्ध पुद्गल परावर्तकाल तक घूमना बाकी रहता है।

मिश्र गुणस्थान-

जीव की दृष्टि (श्रद्धा) जब कुछ (सम्यक्) कुछ अशुद्ध (मिथ्या) होती है उसमें मिश्र गुण-स्थान माना है। जिस से जीव सर्वज्ञ के कहे हुए तत्वों पर न तो एकान्त रुचि करता है और न एकान्त अरुचि। किन्तु वह सर्वज्ञ प्रणीत तत्वों के विषय में इस प्रकार मध्यस्थ रहता है, जिस प्रकार कि नालिकेर द्वीप निवासी मनुष्य तन्दुल (भात) आदि अन्न के विषय में जिस द्वीप में प्रधानतया नारियल पैदा होते हैं वहाँ के अधिवासियों ने चावल आदि अन्न न तो देखा और न सुना इससे

वे अदृष्ट और अश्रुत अन्न को देखकर उसके विषय में रुचि या घृणा नहीं करते। इसी प्रकार मिश्र दृष्टि जीव भी सर्वज्ञ कथित मार्ग पर प्रीति या अप्रीति न करके मध्यस्थ ही रहते हैं।

अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान–

जो सम्यग्दृष्टि होकर भी किसी प्रकार के व्रत को धारण नहीं कर सकता वह जीव अविरत सम्यग्दृष्टि है। यह गुणस्थान सम्यग्दृष्टि देवताओं में पाया जाता है। तथा तिर्थंकर, चक्रवर्त्ती, वासुदेव, बलदेव, प्रतिवासुदेव में भी जबतक दीक्षा-पर्याय को नहीं स्वीकारते हैं तबतक पाया जाता है। क्योंकि गृहस्थाश्रम में रहते हुए किसी प्रकार के नियम का पालन तिर्थंकर आदि नहीं कर सकते।

देश विरत गुणस्थान

प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय के कारण

जो जीव पाप-जनक क्रियाओं से बिलकुल नहीं किन्तु देश (अंश) से अलग हो सकते हैं वे देश विरति या श्रावक कहलाते हैं। श्रावक एक या दो आदि व्रतों को स्वेच्छानुसार ग्रहण कर सकता है।

प्रमत्त संयत गुण स्थान

जो जीव पाप-जनक व्यापारों से विधि पूर्वक सर्वथा निवृत्त हो जाते हैं वे ही संयत (मुनि) है। संयत भी जबतक प्रमाद का सेवन करते हैं, तब-तक प्रमत्त संयत कहाते हैं।

अप्रमत्त संयत गुण स्थान

जो मुनि निद्रा, विषय, कषाय विकथा आदि प्रमादों को नहीं सेते हैं वे अप्रमत्त संयत हैं। सातवें गुण स्थान से लेकर आगे के सब गुण स्थानों में अप्रमत्त अवस्था ही रहती है।

निवृत्ति [अपूर्वकरण] गुणस्थान

इस आठवें गुण स्थान के समय जीव पांच वस्तुओं का विधान करता है जैसे स्थितिघात १ रसघात २ गुणश्रेणि ३ गुण संक्रमण ४ और अपूर्व स्थिति बंध ५

ज्ञानावरण आदि कर्मों की बड़ी स्थिति को अपवर्तना-करण से घटा देना इसे "स्थितिघात" कहते हैं ?

बन्धे हुवे ज्ञानवरणादि कर्मों के प्रचूर रस (फल देने की तीव्र शक्ति) को अपवर्तना करण के द्वारा मन्द कर देना "रसघात" कहलाता है। २

जो कर्म दलिक अपने अपने उदय के नियत समयों से हटाये जाते हैं उनको प्रथम के अन्तर्मुहूर्त्त में स्थापित कर देना "गुणश्रेणि" कहाती है।

पहले बाँधी हुई अशुभ प्रकृतियों के शुभ रूप में परिणत करना "गुणसंक्रमण" कहलाता है।

पहले की अपेक्षा अत्यन्त अल्पस्थिति के कर्मों को बांधना "अपूर्व स्थिति बन्ध" कहलाता है।

ये स्थिति घात आदि पांच भाव यद्यपि पहले गुणस्थान में भी होते हैं, तथापि आठवें गुणस्थान में वे अपूर्व ही होते हैं। क्योंकि प्रथम आदि के गुण स्थानों में अध्यवसायों की जितनी शुद्धि होती है उसकी अपेक्षा आठवें गुणस्थान में अध्यवसायों की शुद्धि अत्यन्त अधिक होती है।

अनिवृत्ति बादर संपराय गुणस्थान

इस गुणस्थान में स्थूल लोभ रहता है। तथा नवम गुणस्थान के सम-समयवर्त्ती जीवों के परिणामों में निवृत्ति (भिन्नता) नहीं होती इसीलिये इस गुणस्थान का "अनिवृत्ति बादर सम्पराय" ऐसा सार्थक नाम शास्त्र में प्रसिद्ध है।

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान

इस गुणस्थान में सम्पराय के अर्थात लोभ॰

कषाय के सूक्ष्म खंडों का ही उदय रहता है इसलिये इसका "सूक्ष्म सम्पराय" गुणस्थान ऐसा सार्थक नाम शास्त्र में प्रसिद्ध है।

उपशान्त कषाय वीतराग छद्मस्थ गुणस्थान

जिस के कषाय उपशान्त हुये हैं। जिन को राग-माया तथा लोभ का सर्वथा उदय नहीं है, और जिनको छद्म-आवरण भूत घाती कर्म लगे हुए हैं, वे जीव "उपशान्त कषाय वीत-राग छद्मस्थ" कहाते हैं।

क्षीण कषाय वीतराग छद्मस्थ गुणस्थान

जिन्होंने मोहनीय कर्म का सर्वथा क्षय किया है परन्तु शेष छद्म-घाति कर्म अभी विद्यमान हैं। वे क्षीण कषाय वीतराग छद्मस्थ कहाते हैं।

सयोगी केवली गुणस्थान

जिन्होंने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, और अन्तराय इन चार घाति कर्मों का क्षय करके, केवल ज्ञान प्राप्त किया है, और जो योग के सहित हैं, वे सयोगी केवली कहाते हैं। तथा उनका स्वरूप विशेष "सयोगी केवली गुणस्थान" कहाता है।

अयोगी केवली गुणस्थान

जो केवली भगवान् योगों से रहित हैं। वे अयोगी केवली कहाते हैं। तथा उनका स्वरूप विशेष "अयोगी केवली गुणस्थान" कहाता है।

बारहवें बोले पांच इन्द्रियों के तेईस विषय—

१. "श्रोत्रेन्द्रिय" के ३ विषय— १ जीव शब्द। २ अजीव शब्द। ३ मिश्र शब्द। मनुष्य, पशु

आदि के आवाज को 'जीव शब्द' कहते हैं। पत्थर, लकड़ी आदि के आवाज को 'अजीव शब्द' कहते हैं। बांसुरी आदि के आवाज को 'मिश्र शब्द' कहते हैं।

२. "चक्षु इन्द्रिय" के ५ विषय— १ काला। २ पीला। ३ नीला। ४ राता। ५ सफेद।

३ "घ्राणेन्द्रिय" के २ विषय— १ सुरभिगन्ध। २ दुरभिगन्ध।

४ "रसनेन्द्रिय" के ५ विषय— १ खट्टा। २ मिट्ठा। ३ कडुआ। ४ कषैला। ५ तीखा।

५ "स्पर्शनेन्द्रिय" के ८ विषय— १ खरदरा। २ सुहाला (मुलायम)। ३ भारी। ४ हलका। ५ ठंडा। ६ गरम। ७ रूखा। ८ चिकना।

प्रश्नोत्तर— शरीर में खरदरा क्या है? पैर की एडी। मुलायम क्या है? गले का तालवा। भारी क्या है? अस्थी (हड्डी)। हलका क्या है? केश। ठंडा क्या है? कान की लोल। गरम क्या है? कलेजा। रूखा क्या है? जीभ। चिकना क्या है? आंख की कीकी।

पांच इन्द्रियों के २४० विकार

१ श्रोतेन्द्रिय के १२ विकार— १ जीव शब्द। २ अजीव शब्द। ३ मिश्र शब्द। ये ३ शुभ और ३ अशुभ। इन ६ उपर राग और ६ उपर द्वेष इस प्रकार १२।

२. चक्षुइन्द्रिय के पांच विषयों के ६० विकार— ५ सचित्त। ५ अचित्त। ५ मिश्र। ये १५ शुभ और १५ अशुभ इन ३० उपर राग और ३० ऊपर द्वेष इस प्रकार ६०।

३. घ्राणेन्द्रिय के दो विषयों के १२ विकार— २ सचित्त। २ अचित्त। २ मिश्र। इन ६ उपर राग और ६ ऊपर द्वेष इस प्रकार १२।

४. रसनेन्द्रिय के पांच विषयों के ६० विकार— ५ सचित्त। ५ अचित्त। ५ मिश्र ये १५ शुभ और १५ अशुभ इन ३० ऊपर राग और ३० ऊपर द्वेष इस प्रकार ६०।

५. स्पर्शनेन्द्रिय के आठ विषयों के ९६ विकार— ८ सचित्त। ८ अचित्त। ८ मिश्र। ये २४ शुभ

और २४ अशुभ इन ४ ऊपर राग और ४८ ऊपर द्वेष इस प्रकार ९६। सब २४० विकार हैं

इन्द्रियों के विषय किनको कहते हैं ?

पांच इन्द्रियों के जरिये आत्मा के अनुभव में आने वाले पुद्गल के स्वरूप को इन्द्रियों का विषय कहतेहैं

तेरहवें बोले मिथ्यात्व के १० भेद

१ जीव को अजीव मानना मिथ्यात्व
२ अजीव को जीव मानना मिथ्यात्व
३ धर्म को अधर्म मानना मिथ्यात्व
४ अधर्म को धर्म मानना मिथ्यात्व
५ साधु को असाधु मानना मिथ्यात्व
६ असाधु को साधु मानना मिथ्यात्व
७ संसार के मार्ग को मुक्ति का मार्ग मानना मिथ्यात्व

८ मुक्ति के मार्ग को संसार का मार्ग मानना मिथ्यात्व।

९ अष्ट कर्मों से मुक्त हुए को अमुक्त मानना मिथ्यात्व।

१० अष्ट कर्मों से अमुक्त को मुक्त हुए मानना मिथ्यात्व।

मिथ्यात्व किसको कहते हैं?

कुदेव, कुगुरु, कुधर्म और कुशास्त्र पर श्रद्धान विश्वास करना उसको मिथ्यात्व कहते हैं।

चौदहवें बोले नवतत्त्व के ११५ भेद

नवतत्त्वों के नाम

१ जीव तत्त्व २ अजीव तत्त्व ३ पुण्य तत्त्व ४ पाप तत्त्व ५ आश्रव तत्त्व ६ संवर तत्त्व ७ निर्जरा तत्त्व ८ बन्ध तत्त्व ९ और मोक्ष तत्त्व। जीव के १४

अजीव के १४, पुण्य के ९, पाप के १८, आश्रव के २०, संवर के २०, निर्जरा के १२, बन्ध के ४, मोक्ष के ४, कुल ११५।

जीव किसको कहते हैं?

जो चेतना लक्षण, उपयोग लक्षण, सुख:दुख का वेदक, पर्याप्ति-प्राणों का धारक, अष्टकर्मों का कर्त्ता, और भोक्ता। तीनों काल में शाश्वत, कतई विनाश न होने वाला और असंख्य प्रदेशी हो, उसको "जीव" कहते हैं।

जीव के १४ भेद

१ सूक्ष्म एकेन्द्रिय के	२ भेद	अपर्याप्त	और	पर्याप्त
२ बादर एकेन्द्रिय के	"	"		"
३ बेइन्द्रिय के	"	"		"
४ तेइन्द्रिय के	"	"		"
५ चतुरिन्द्रिय के	"	"		"
६ असन्नी पंचेन्द्रिय के	"	"		"
७ सन्नी पंचेन्द्रिय के	"	"		"

७ अप्रयाप्त और ७ प्रयाप्त कुल मिलाकर १४ हुए

अजीव किसको कहते हैं?

जो चेतना रहित होने सुख दुःख का अनुभव न करता हो, पर्याप्ति, प्राण, जोग, उपयोग और आठ कर्मों से रहित हो जड़ स्वरूप हो उसे 'अजीव' कहते हैं।

अजीव के १४ भेद

धर्मास्तिकाय के तीन भेद-खंध १ देश २ प्रदेश ३
अधर्मास्तिकायके तीन भेद-खंध १ देश २ प्रदेश ३
आकाशास्तिकायके तीनभेद-खंध १ देश २ प्रदेश ३

१ समुदाय को **खंध** कहते हैं जैसे **लड्डु**

२ सुमुदाय में इच्छा कल्पित भाग को **देश** कहते हैं। जैसे लड्डुका आधा चोथा हिस्सा।

३ समुदाय में जो अविभागी भाग है उसे **प्रदेश** कहते हैं-जैसे लड्डुका अन्तिम विभाग जिसके दो टुकडे नहीं हो सके उसको प्रदेश कहते हैं।

४ समुदाय से जुदे पड़े हुये अविभागी भाग को परमाणु कहते हैं।

पुण्य के ९ भेद

१ अन्नपुण्य---अन्न देने से पुण्य होता है।
२ पाणपुण्य---पानी देने से पुण्य होता है।
३ लयनपुण्य--जगह स्थान वगेरह देने से पुण्य होता है।
४ शयनपुण्य--शय्या पट्टा आदि देने से पुण्य होता है।
५ वत्थपुण्य— वस्त्र देने से पुण्य होता है।
६ मनपुण्य-- दान, शील, तप, आदि में मन रखने से पुण्य होता है।
७ वचनपुण्य- मुँह से सत्य वचन का उच्चारण करने से पुण्य होता है।
८ नमस्कारपुण्य--नमस्कार करने से पुण्य होता है

पुण्य किसको कहते हैं?

जो आत्मा को पवित्र करे तथा जिसकी शुभ

प्रकृति हो उसीको पुण्य कहते हैं। तप आदि महान क्रिया करके श्रेष्ठ पुण्य का उपार्जन करता है। उस पुण्य के प्रभाव से इस जन्म में या दूसरे जन्म में सुख की प्राप्ति होती है।

पाप के १८ भेद

१	प्राणातिपात	—	जीवों की हिंसा करना।
२	मृषावाद	—	असत्य-झूठ का बोलना।
३	अदत्तादान	—	चोरी करना।
४	मैथुन	—	काम भोग सेवन करना।
५	परिग्रह	—	द्रव्य आदि रखना।
६	क्रोध	—	गुस्सा करना।
७	मान	—	घमण्ड-अहंकार करना।
८	माया	—	कपटाई-ठगाई करना।
९	लोभ	—	तृष्णा बढ़ाना।
१०	राग	—	स्नेह रखना, प्रीति करना।
११	द्वेष	—	विरोध रखना।
१२	कलह	—	क्लेश-झगड़ा करना।
१३	अभ्याख्यान	—	झूठा कलंक लगाना।

१४ पैशुन्य — चुगली करना।
१५ परपरिवाद — निन्दा करना।
१६ रतिअरति — पांच इन्द्रियों को श्रेष्ठ पदार्थ मिलने पर प्रेम-रति और अच्छा नहीं मिलने पर-अरति
१७ मायामृषावाद— कपटाई सहित झूँठ का बोलना।
१८ मिथ्यादर्शनशल्य—कुदेव, कुगुरु और कुधर्म पर श्रद्धा रखना।

पाप किसको कहते हैं?

जो आत्मा को मलीन करे, तथा जिसकी अशुभ प्रकृति हो उसे पाप कहते हैं। जीव हिंसा अत्याचार आदि करके पाप का उपार्जन करता है। उस पाप के प्रभाव से इस जन्म में या दूसरे जन्म में दुख की प्राप्ति होती है।

आश्रव के २० भेद।

१ मिथ्यात्व आश्रव—मिथ्यात्व का पालन करने से कर्म आते हैं।

२ अव्रत—	पच्चखाण नहीं करने से कर्म आते हैं।
३ प्रमाद—	पांच प्रमाद का सेवन करने से कर्म आते हैं।
४ कषाय—	पचीस कषायों का सेवन करने से कर्म आते हैं।
५ अशुभ जोग—	मन, वचन, काया के योगों को अशुभ में प्रवरताने से कर्म आते हैं।
६ प्राणातिपात—	जीव की हिंसा करने से कर्म आते हैं।
७ मृषावाद—	झूठ बोलने से कर्म आते हैं।
८ अदत्तादान—	चोरी करने से कर्म आते हैं।
९ मैथुन—	कुशील का सेवन करने से कर्म आते हैं।
१० परिग्रह—	धन सुवर्ण, चांदी आदि का सेवन करने से कर्म आते हैं।
११ श्रोत्रेन्द्रिय—	कान को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।

१२ चक्षुइन्द्रिय—	आँख को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।
१३ घ्राणेन्द्रिय—	नाक को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।
१४ रसनेन्द्रिय—	जीभ को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।
१५ स्पर्शनेन्द्रिय—	शरीर को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।
१६ मन—	मन को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।
१७ वचन—	वचन को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।
१८ काया—	काया को वश में नहीं रखने से कर्म आते हैं।
१९ भंडोपकरणास्रव—	वस्त्र पात्र आदि की जयणा नहीं करने से कर्म आते हैं।
२० कुसंगास्रव—	कुसंगति करने से कर्म आते हैं।

आश्रव किसको कहते हैं

मिथ्यात्व, कषाय अविरति कषाय योगों के द्वारा उपार्जन किये हुए कर्मों के आने के मार्ग को आश्रव कहते हैं।

संवर तत्व के २० भेद

१ सम्यक्त्व संवर—सच्चे देव गुरु और धर्म पर श्रद्धा रखने से संवर होता है।

२ व्रत संवर— पच्चखाण करने से संवर होता है।

३ अप्रमाद संवर— पांच प्रमाद का सेवन नहीं करने से संवर होता है।

४ अकषाय संवर— पच्चीस कषायों को नहीं प्रवरताने से संवर होता है।

५ योग संवर— मन, वचन काया को शुभ योगों मे प्रवर्ताने से संवर होता है।

६. दया संवर—	जीवों की हिंसा नहीं करने से संवर होता है।
७. सत्य संवर—	झूठ नहीं बोलने से संवर होता है।
८ अचौर्य संवर—	चोरी नहीं करने से संवर होता है।
९. शील संवर—	ब्रह्मचर्य का पालन करने से संवर होता है।
१०. परिग्रह संवर—	धन्य धान्य का परिमाण करने से संवर होता है।
११ श्रोत्रेन्द्रिय संवर—	कान को वश में रखने से संवर होता है।
१२ चक्षुइन्द्रियसंवर—	आंख को वश में रखने से संवर होता है।
१३ घ्राणेन्द्रिय संवर—	नाक को वश में रखने से संवर होता है।
१४ रसनेन्द्रिय संवर—	जिह्वा को वश में रखने से संवर होता है।
१५ स्पर्शनेन्द्रिय संवर—	शरीर को वश में रखने से संवर होता है।

१६ मनः संवर— मन को वश में रखने से संवर होता है।

१७ वचन संवर— वचन को वश में रखने से संवर होता है।

१८ काया संवर— काया को वश में रखने से संवर होता है।

१९ भंडोपकरण संवर—वस्त्र पात्र आदि की जयणा रखने से संवर होता है।

२० कुसंग संवर— खराब संगति से दूर रहने से संवर होता है।

संवर किसको कहते हैं।

आते हुए कर्मों को रोकने वाली क्रिया को संवर कहते हैं।

निर्जरा के २२ भेद—

१ अनशन— चार प्रकार के या तीन प्रकार के आहार का त्याग करना।

२ उणोदरी— भोजन की अधिक रुचि होने पर कम भोजन करना।

३ वृत्ति संक्षेप—खाने पीने आदि भोग उपभोग में आने वाली चीजों का संक्षेप करना।

४ रसपरित्याग-विगयादिक का त्याग करना।

५ कायक्लेश— वीर आसन आदि करना।

६ पडिसंलीणया-(प्रति संलीनता) एकान्त शयनासन करना।

७ प्रायश्चित्त— पाप कर्मों की आलोचना करके आत्मा को शुद्ध करना।

८ विनय— गुरु महाराज आदि का विनय करना।

९ वेयावच्च— आचार्यादिक की दश प्रकार से सेवा करना।

१० सज्झाय— शास्त्र का पठन पाठन करना।

११ ध्यान— मन को एकाग्र करना।

१२ कायोत्सर्ग—काया के व्यापारों का त्याग करना।

निर्जरा तत्त्व किसको कहते हैं ?

आत्मा से कर्म वर्गणा का दूर होना, जैसे ज्ञानरूप पानी, और तप संयम रूप साबून को लगाकर जीव रूप वस्त्र से कर्म रूप मैल को दूर करना, उसे निर्जरा तत्त्व कहते हैं।

बन्ध तत्त्व के ४ भेद

१ प्रकृति बन्ध—आठ कर्मों का स्वभाव। कोई कर्म ज्ञान का आवरण है कोई दर्शन का आवरण जैसे कि लड्डु कोई वादी को दूर करता है कोई पित्त को कोई कफ को उसी प्रकार ८ कर्मों के अलग २ स्वभाव हैं।

२ स्थिति बन्ध—आठ कर्म की स्थिति (काल) का मान प्रमाण। किसी कर्म की ७० कोड़ा कोड़ सागरोपम की किसीर की ३०-२० कोड़ा कोड़ सागरोपम की स्थिति है। जैसे कि कोई लड्डु

एक पक्ष तक कोई मास कोई दो मास तक ठीक रहता है। उसी प्रकार अलग२ कर्मों का स्थिति प्रमाण है।

३ अनुभाग बंध–आठ कर्मों का तीव्र मंदादि रस जैसे कोई लड्डु अधिक मिठास वाला होता है, कोई कम मिठास वाला होता है, उसी प्रकार कर्मों के बन्ध में तीव्र मंदादि रस पड़ता है।

४ प्रदेश बंध–कर्मों के दलियों का इकट्ठा होना उसे प्रदेश बंध कहते हैं, जैसे कोई लड्डु आध सेर का कोई पाव सेर का होता है। ठीक उसी प्रकार कोई कर्म अधिक दलवाला होता है कोई अल्प दल वाला होता है।

बन्ध किसको कहते हैं?

जीव मिथ्यात्व अविरति कषाय और योग प्रवृत्ति से कर्म पुद्गलों को ग्रहण कर खीर नीर की तरह अर्थात् लोहपिंड अग्नि की तरह आत्म प्रदेशों के साथ संबन्धित करे उनको बन्ध कहते हैं।

मोक्ष मार्ग के ४ भेद

सम्यग्ज्ञान १। सम्यग्दर्शन २। सम्यग्-चारित्र ३ और ४ तप ऐसे ये मोक्ष मार्ग के चार भेद हैं

सम्यग्दर्शन किसको कहते हैं

रुचिर्जिनोक्त तत्त्वेषु, सम्यक् श्रद्धानमुच्यते।
जायते तन्निसर्गेण, गुरोरधिगमेन वा ॥ १ ॥

अर्थात् जिन प्रणीत तत्त्वों में स्वभाव से अथवा गुरुगम से जो श्रद्धान पैदा होता है। उसे सम्यग् दर्शन कहते हैं।

सम्यग् ज्ञान किसको कहते हैं

यथावस्थित तत्त्वानां, संक्षेपाद्विस्तरेण वा

योऽयंबोधस्तमत्राहुः सम्यग्ज्ञान मनीषिणः ॥

संक्षेप से अथवा विस्तार से तत्त्वों का जो यथार्थ बोध होना है । उसको विवेकी पंडित सम्यग्ज्ञान कहते हैं।

सम्यक् चारित्र किसको कहते हैं?

सर्व सावद्य योगानां, त्यागश्चारित्रमिष्यते ।
कीर्तितं तदिह सार्वैर्वृत्त--भेदेन पञ्चधा ।३॥

अर्थात् सब पाप प्रवृत्तियों का जो त्याग किया जाता है, उसको चरित्र कहते हैं। सर्वज्ञ भगवानों ने आचरण भेद से उसको पंच प्रकार का बताया है।

तप किसको कहते हैं!

इच्छारोधन मुख्यं यद्-बाह्याभ्यन्तरं द्विधा ।
तपः प्रोक्तं जिनैःपुण्यं,कर्म मर्म विभेद कृत्॥४॥

जिसमें इच्छारोधन मुख्य है जिसके बाह्य और अभ्यन्तर ऐसे दो भेद हैं। जो कर्म मर्म को भेदने वाला है उस पुण्य आचरण को तीर्थंकरों ने तप फरमाया है।

मोक्ष किसको कहते हैं?

आत्मा का कर्मरूप फाँसी से सर्वथा छूट जाना, तथा सम्पूर्ण आत्मा के प्रदेशों से सब कर्मों का क्षय होना, बन्धन से छूटना। उसको मोक्ष कहते हैं।

पन्द्रहवें बोले आत्मा ८।

द्रव्य आत्मा १ कषाय आत्मा २ योग-आत्मा ३ उपयोग आत्मा ४ ज्ञान आत्मा ५ दर्शन आत्मा ६ चारित्र आत्मा ७ वीर्य आत्मा ८।

१ अस्थि, मांस, शोणित, त्वचा आदि बाह्य शरीर को द्रव्यात्मा कहते हैं।

२ क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायों सहित जो आत्मा है। उसे कषायात्मा कहते हैं।

३ मन, वचन, और काया के द्वारा जो क्रिया की जाती है, उसे योगात्मा कहते हैं।

४ उपयोग सहित आत्मा को उपयोगात्मा कहते हैं।

५ ज्ञान सहित आत्मा को ज्ञानात्मा कहते हैं।

६ दर्शन सहित आत्मा को दर्शनात्मा कहते हैं।

७ चारित्र सहित आत्मा को चारित्रात्मा कहते हैं।

८ आत्म शक्ति के विकास करने को वीर्यात्मा कहते हैं।

आत्मा किसको कहते हैं ?

जो ज्ञानादि पर्यायों में निरन्तर गमन करे उसको आत्मा कहते हैं।

सोलहवें बोले दंडक २४।

सात नारकियों का एक दंडक १ दश भवन पति देवों के दश दंडक। असुर कुमार २ नाग कुमार ३ सुवर्ण कुमार ४ तडित कुमार ५ अग्नि कुमार ६ द्वीप कुमार ७ उदधि कुमार ८ दिशा कुमार ९ वायु कुमार १० स्तनित कुमार ११

यह दश। पृथ्वीकाय १२ अप् काय १३ तेउकाय १४ वायुकाय १५ वनस्पति काय १६ बेइन्द्रिय १७ तेइन्द्रिय १८ चौरिन्द्रिय १९ तिर्यंच पंचेन्द्रिय २० मनुष्य २१ व्यन्तर २२ ज्योतिषी २३ वैमानिक देव २४ ये चौवीस दंडक हैं।

दंडक किसको कहते हैं?

जिन स्थानों में कर्म के प्रभाव से जीव दंडित होता है। उन स्थानों को दण्डक कहते हैं। अथवा सूत्रों में जिनका वर्णन समान रूप से बताया है, वे दंडक कहे जाते हैं। जैसे धातु पाठ में समान स्वरूप वाले धातुओं को दंडक धातु कहते हैं।

सत्तरहवें बोले लेश्या छः!

कृष्णलेश्या १ नीललेश्या २ कापोतलेश्या ३ तेजोलेश्या ४ पद्मलेश्या ५ शुक्ललेश्या ६।

कृष्ण लेश्यावाले के लक्षण

अनिरौद्रः सदाक्रोधी, मत्सरी धर्मवर्जितः।
निर्दयो वैर-संयुक्तः, कृष्णलेश्याधिको नर ॥ १॥

अर्थात् कृष्णलेश्या की अधिकता वाला मनुष्य अत्यंत रौद्र प्रकृतिवाला, नित्यक्रोधी, मत्सरी, धर्म से हीन, दया रहित एवं गहरी दुश्मनावट रखने वाला होता है।

नीललेश्यावाले के लक्षण

अलसो मन्दबुद्धिश्च, स्त्रीलुब्धः परवंचकः।
कातरश्च सदामानी, नील लेश्याधिको नरः ॥

अर्थात् नीललेश्या की अधिकता वाला मनुष्य आलसी, मूढबुद्धि वाला, स्त्रीलुब्ध, दूसरों को ठगने वाला, कायर-डरपोक, और नित्यमानी होता है।

कापोत लेश्यावाले के लक्षण

शोकाकुलः सदारुष्टः, परनिन्दात्मशंसकः।
संग्रामे प्रार्थते मृत्युं, कापोतक उदाहृतः ॥ ३॥

अर्थात् कापोतलेश्या की अधिकता वाला मनुष्य चिंता शोक से आकुल रहता है, हमेशा रोष किया करता है, परनिंदा और स्वप्रशंसा करने वाला होता है, और संग्राम में मृत्यु की प्रार्थना करता है।

तेजो लेश्या वाले के लक्षण

विद्यावान् करुणायुक्तः, कार्याकार्य विचारकः।
लाभालाभे सदा प्रीति स्तेजो लेश्याधिको नरः ॥४॥

अर्थात्-तेजो लेश्या की अधिकता वाला मनुष्य विद्वान्, दयालु, कार्य अकार्य का विचार करने-वाला विवेकी लाभ हो चाहे अलाभ हो, मित्रता को नहीं तोड़ने वाला होता है।

पद्म लेश्या के लक्षण

क्षमाशीलः सदा त्यागी, गुरुदेवेषु भक्तिमान्।
शुद्धचित्तः सदानन्दी, पद्मलेश्याधिको नरः ॥५॥

अर्थात् पद्म- लेश्या की अधिकता वाला मनुष्य हमेशा क्षमाशील त्यागी गुरु और देव की भक्ति

करने वाला निर्मल चित्तवाला और सदानंदी होता है।

शुक्ल लेश्या वाले के लक्षण

राग-द्वेष-विनिर्मुक्तः शोक निन्दाविवर्जितः।
परमात्मता संपन्न, शुक्ल-लेश्यो भवेन्नरः ॥६॥

अर्थात् शुक्ल लेश्या की अधिकता वाला मनुष्य राग द्वेष से मुक्तशोक और निद्रा से रहित और परमात्मा के ऐश्वर्य से सम्पन्न होता है।

लेश्या किसको कहते हैं?

जिसके द्वारा आत्मा कर्मों से लिप्त होती है। ऐसे मन के शुभाशुभ परिणाम को लेश्या कहते हैं।

अठारहवें बोले दृष्टि-३।

सम्यग्दृष्टि १ मिथ्यादृष्टि २ सम्यग्मिथ्या-

सम्यग्दृष्टि किसको कहते हैं ?

सत्य तत्त्व को सत्य मानना, और असत्य को असत्य मानना सम्यग्दृष्टि का लक्षण है।

मिथ्यादृष्टि किसको कहते हैं?

सत्य तत्त्व को असत्य मानना, और असत्य को सत्य मानना-मिथ्यादृष्टि का लक्षण है।

सम्यग्मिथ्या दृष्टि किसको कहते हैं ?

सत्य और असत्य को समान मानना, सम्यग्मिथ्या--मिश्रदृष्टि का लक्षण है।

दृष्टि किसको कहते हैं।

अन्तःकरण की प्रवृत्ति को अर्थात् मन के अभिप्राय को दृष्टि कहते हैं।

उन्नीसवें बोले ध्यान-४।

आर्त्तध्यान १ रौद्रध्यान २ धर्मध्यान ३ शुक्ल ध्यान ४।

आर्त्तध्यान किसको कहते हैं

अनिष्ट वस्तु का वियोग और इष्टवस्तु का संयोग चिन्तवना आर्त्तध्यान है।

रौद्रध्यान किसको कहते हैं

हिंसादि दुष्टआचरणों की चिन्तवना रौद्रध्यान है।

धर्मध्यान किसको कहते हैं

निर्जरा के लिये शुभ आचरणादि की चिन्तवना, तथा संसार की अनित्यता पर विचार करना, धर्मध्यान है।

शुक्लध्यान किसको कहते हैं ?

संसार पुद्गल कर्म और जीवादि के स्वरूप स्वभाव को विशुद्ध रीति से विचारना शुक्लध्यान है

ध्यान किसको कहते हैं

एक ध्येय वस्तु पर मनको स्थिर करना, उसको ध्यान कहते हैं।

बीसवें बोले षट्द्रव्य के ३० भेद

धर्मास्तिकाय १ अधर्मास्तिकाय २ आकाशास्तिकाय ३ कालद्रव्य ४ जीवास्तिकाय ५ पुद्गलास्तिकाय ६

धर्मास्तिकाय के ५ बोल

द्रव्य से एक द्रव्य १, क्षेत्र से पूर्ण लोक प्रमाण २, काल से आदि अन्त रहित (अनादि अनन्त) ३, भाव से वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श रहित अरूपी अजीव शाश्वत सर्वव्यापी और असंख्यात प्रदेशी है ४, गुण से चलन स्वभाव जैसे जल की सहायता से मछली चलती है, ठीक इसी तरह जीव और पुद्गल दोनों धर्मास्तिकाय की सहायता से चलते हैं-५.

अधर्मास्तिकाय के ५ बोल

द्रव्य से एक द्रव्य १, क्षेत्र से पूर्ण लोक प्रमाण २, काल से आदि अन्त रहित (अनादि अनंत) ३, भाव

से वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श रहित अरूपी अजीव शाश्वत सर्व व्यापी और असंख्यात प्रदेशी है ४, गुण से स्थिर स्वभाव जैसे थके हुए मनुष्य को छाया का सहारा होता है ऐसे ही जीव और पुद्गल के ठहरने में अधर्मास्तिकाय सहायभूत होता है।

आकाशास्तिकाय के ५ बोल

द्रव्य से एक द्रव्य १ क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण २ काल से आदि अन्त रहित (अनादि अनन्त) ३, भाव से वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श रहित अरूपी अजीव शाश्वत सर्वव्यापी और अनन्त प्रदेशी है ४, गुण से अन्य द्रव्यों को अवकाश देनेवाला जैसे भीत में खूंटी, या दूध में मिश्री ५।

कालद्रव्य के ५ बोल

द्रव्य से अनन्त द्रव्यों में प्रवर्त्तता है- १, क्षेत्र से अढाई द्वीप प्रमाण- २, काल से आदि और अन्त रहित (अनादि अनन्त)- ३, भाव से

वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श रहित अरूपी शाश्वत और और अप्रदेशी है-- ४, गुण से पर्यायों का परिवर्तन करता है जैसे कपड़े के लिये कैंची- ५।

जीवास्तिकाय के ५ बोल

द्रव्य से अनन्त जीवद्रव्य-- १, क्षेत्र से पूर्ण लोक प्रमाण- २, काल से आदि अन्त रहित (अनादि अनन्त)--३, भाव से वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श रहित अरूपी शाश्वत है। स्व शरीरावगाहना प्रमाण व्याप्त होकर रहने वाला असंख्य प्रदेशी होता है -४, गुण से चेतन अर्थात् ज्ञान सहित होता है-- ५।

पुद्गलास्तिकाय के ५ बोल

द्रव्य से अनन्त द्रव्य १ क्षेत्र से पूर्ण लोक प्रमाण २ काल से आदि अन्त रहित ३ भाव से वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श सहित रूपी है४ अजीव शाश्वत और अनन्त प्रदेशी है ५ गुण से गलन, सड़न, विध्वंसन स्वभाव वाला है।

द्रव्य किसको कहते हैं।

जो नाना प्रकार की अवस्था-पर्यायों में परिणत होने पर भी अपने भाव से हीन नहीं होता है। उसको द्रव्य कहते हैं।

इक्कीसवें बोले राशि २

जीव राशि १ अजीव राशि २।

जीवराशि किसको कहते हैं

मनुष्य, हस्ती, घोड़े, गाय, अनाज वगैरह जीव राशि में समावेश होते हैं।

अजीवराशि किसको कहते हैं ?

घट, पट, कागज वगैरह अजीव राशि में समावेश होते हैं।

राशि किसको कहते हैं ?

वस्तु के समूह को राशि कहते हैं।

बाईसवें बोले श्रावक के बारह व्रत।

१ प्रथम व्रत में घूमते फिरते निरपराधी जीवों को नहीं मारना।
२ द्वितीय व्रत में बड़ा झूठ नहीं बोलना।
३ तृतीय व्रत में बड़ी चोरी नहीं करनी।
४ चतुर्थ व्रत में पुरुष के लिये परस्त्री और वेश्या आदि का त्याग, और स्वस्त्री की मर्यादा करना। स्त्री के लिये परपुरुष का सर्वथा त्याग और स्वपति में संतोष रखना।
५ पंचम व्रत में नव प्रकार के परिग्रह धन-धान्य आदि का परिमाण करना।
६ छट्ठे व्रत में छः दिशाओं में अमुक हद से अधिक नहीं जाना ऐसा परिमाण करना।

७ सप्तम व्रत में भोग और उपभोग में आने-वाली चीजों का परिमाण करना, और १५ कर्मादान का त्याग करना।

८ आठवें व्रत में अनर्थ दण्ड का त्याग करना। जिस क्रिया के करने में कोई स्वार्थ सिद्ध नहीं होता, केवल पाप ही पाप लगता है, जैसे रास्ते चलते हुवे, पशु को मारना। नदी तालाब आदि में स्नान करने को लोगों को प्रेरणा करना, इत्यादि पापोपदेशों को अनर्थ दण्ड कहते हैं।

९ नवमें व्रत में ४८ मिनिट परिमाण सामायिक करना।

१० दशवें देशावकाशिक व्रत में कम से कम तीन सामायिक काल तक छट्ठे व्रत में रखे हुए दिशा परिमाण का संकोच करना।

११ ग्यारहवें व्रत में पोषध का करना।

१२ बारहवें व्रत में अतिथि शुद्ध साधु को दान देना, उनके अभाव में स्वधर्मी वात्सल्य करना।

व्रत किस को कहते हैं?

मर्यादा से गृहीत नियमों को व्रत कहते हैं।

तेईसवें बोले मुनियों के पंच महाव्रत।

१ प्रथम महाव्रत में साधुजी महाराज जीव की हिंसा करते नहीं, कराते नहीं, करते हुए को अच्छा समझे नहीं, मन-वचन और काया, से।

२ दूसरे महाव्रत में साधुजी महाराज असत्य भाषण करते नहीं, कराते नहीं, करते हुए को अच्छा समझते नहीं मन वचन और काया से

३ तृतीय महाव्रत में साधुजी महाराज चोरी करते नहीं, कराते नहीं, करते हुए को अच्छा समझते नहीं। मन-वचन और काया से

४ चतुर्थ महाव्रत में साधुजी महाराज स्त्री संग करते नहीं, कराते नहीं, करते हुए को अच्छा समझते नहीं। मन-वचन और काया से

५ पंचम महाव्रत में साधुजी महाराज परिग्रह रखते नहीं, रखाते नहीं, रखते हुए को अच्छा समझते नहीं। मन-वचन और काया से

महाव्रत किसको कहते है?

हिंसा, असत्य वचन, चोरी, कुशील, परिग्रह, इन पांचों को तीन करण, तीन योग से सर्वथा त्याग करने रूप सर्व विरति को महाव्रत कहते है।

चौवीसवें बोले भांगे ४९।

आंक एक ग्यारह- भांगे हुए नव। एक करण एक योग से।

१ करूं नहीं मन से। ४ कराऊं नहीं मन से।
२ करूं नहीं वचन से। ५ कराऊं नहीं वचन से।
३ करूं नहीं काया से। ६ कराऊं नहीं काया से।
७ अनुमोदूं नहीं मन से।
८ अनुमोदूं नहीं वचन से।
९ अनुमोदूं नहीं काया से।

आंक एक बारह,- भांगे हुए नव। एक करण दो योग से।

१ करूं नहीं, मन से वचन से।
२ करूं नहीं, मन से काया से।

३– करूं नहीं वचन से काया से ।

४– कराऊं नहीं मन से वचन से ।

५– कराऊं नहीं मन से काया से ।

६– कराऊं नहीं वचन से काया से ।

७– अनुमोदूं नहीं मन से वचन से ।

८– अनुमोदूं नहीं मन से काया से ।

९– अनुमोदूं नहीं वचन से काया से ।

आंक एक तेरह भांगे हुए तीन । एक करण तीन योग से ।

१- करूं नहीं मन से वचन से काया से ।

२– कराऊं नहीं मन से वचन से काया से ।

३– अनमोदूं नहीं मन से वचन से काया से ।

आंक एक इक्कीस– भांगे हुए नव । दो करण एक योग से ॥

१– करूं नहीं कराऊं नहीं मन से ।

२– करूं नहीं कराऊं नहीं वचन से ।

३– करूं नहीं कराऊं नहीं काया से ।

४– करूं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से ।

५– करूं नहीं अनुमोदूं नहीं वचन से ।

६– करूं नहीं अनुमोदूं नहीं काया से ।

७ कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से।

८ कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, वचन से।

९ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं, काया से।

आंक एक बाईस भांगे हुए नव। दो करण दो योग॥

१ करूं नहीं कराऊं नहीं, मन से वचन से।

२ करूं नहीं कराऊं नहीं, मन से काया से।

३ करूं नहीं कराऊं नहीं, वचन से काया से।

४ करूं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से वचन से।

५ करूं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से काया से।

६ करूं नहीं अनुमोदूं नहीं वचन से काया से।

७ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से वचन से।

८ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से काया से।

९ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं वचन से काया से।

आंक एक तेईस, भांगे हुए तीन। दो करण तीन योग से।

१ करूं नहीं कराऊं नहीं मन से वचन से काया से।

२ करूं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से वचन से काया से।

३ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से वचन से काया से।

आंक एक इकत्तीस, भांगे हुए तीन। तीन करण एक योग से।

१ करूं नहीं कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से।

२ करूं नहीं कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं वचन से।

३ करूं नहीं कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं काया से।

आंक एक बत्तीस, भांगे हुए तीन तीन करण दो योग से।

१ करूं नहीं कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से वचन से।

२ करूं नहीं कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से काया से।

३ करूं नहीं कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं वचन से काया से।

आंक एक तेतीस, भांगा हुआ एक। तीन करण तीन योग से।

१ करूं नहीं कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं
मन से वचन से काया से।

भंग कोष्टक ज्ञान

आंक	११	१२	१३	२१	२२	२३	३१	३२	३३
भांग	९	९	३	९	९	३	३	३	१
करण	१	१	१	२	२	२	३	३	३
योग	१	२	३	१	२	३	१	२	३
सर्व भांग	९	१८	२१	३०	३९	४२	४५	४८	४९

भंग किसको कहते हैं ?

विभाग रचना को भंग कहते हैं। इन उनचास भंगों से यह मतलब होता है, कि प्रत्याख्यान करने-वाला, अपनी इच्छानुसार किसी भी एक भंग को स्वीकारता हुआ प्रत्याख्यान करता है।

पच्चीसवें बोले चारित्र ५।

सामायिक चारित्र १ छेदोप स्थापनीय चारित्र २ परिहार विशुद्धि चारित्र ३ सूक्ष्म संपराय चारित्र ४ यथाख्यात चारित्र ५।

१-सामायिक चारित्र किसको कहते हैं ?

राग द्वेष की विषमता को मिटाकर शत्रु मित्र के प्रति समता भाव धारण करना, और उस भाव से जो ज्ञान दर्शन और चारित्र का आय-लाभ होना सम-आय को पैदा करने वाले अनुष्ठान विशेष को सामायिक कहते हैं। जो साधु साध्वी महाराज के छोटी दीक्षा के काल उत्कृष्ट छः महीने तक रहता है, और जघन्य ४८ मिनीट तक रहता है। ४८ मिनीट वाले सामायिक चारित्र के गृहस्थ श्रावक श्राविका भी अधिकारी हैं।

२-छेदोपस्थापनीय चारित्र किसको कहते हैं?

छोटी दीक्षा के पर्याय का छेदकर के स्थिर संयम में उपस्थिति करने रूप बड़ी दीक्षा के अनुष्ठान को छेदोपस्थापनीय कहते हैं। जो छट्टे प्रमत्त संयम गुणस्थानवर्ती साधु साध्वी महाराजों के यावज्जीवन के लिये होता है।

३-परिहार विशुद्धि चारित्र किसको कहते हैं?

विशिष्ट श्रुत-पूर्वधारी नव साधुओं का संघ अपने आत्मा की विशुद्धि के लिये अपने साधु समुदाय से जुदा होकर, विशिष्ट तप। ध्यान रूप जिस अनुष्ठान को करता है, उसको परिहार विशुद्धि चारित्र कहते हैं।

४-सूक्ष्म संपराय चारित्र किसको कहते हैं ?

जिस कषाय भाव से संसार में परिभ्रमण होता है उसको संपराय कहते हैं वह जिस अनुष्ठान से अत्यन्त सूक्ष्म कर दिया जाय उसको सूक्ष्म संपराय चारित्र कहते हैं। जो दशवें सूक्ष्म संपराय गुणस्थानवर्ती साधुओं में पाया जाता है।

५-यथाख्यात चारित्र किसको कहते हैं ?

यथा-जैसे तीर्थङ्कर देवने ख्यात-फ़रमाया है उसी प्रकार के विशुद्ध अनुष्ठान को यथाख्यात चारित्र कहते हैं। जो बारहवें क्षीणमोह गुण स्थानवर्ती साधुओं में पाया जाता है।

चारित्र किसको कहते हैं?

चारित्र मोहनीय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाले विषयों के त्याग रूप विरति परिणाम से किये हुए संयम अनुष्ठान को और आठ कर्मों के चय समुदाय के नाश को चारित्र कहते हैं।

छब्बीसवें बोले नय ७

नैगमनय-१ संग्रहनय २ व्यवहारनय ३ ऋजु-सूत्रनय ४ समभिरूढनय ६ एवंभूतनय ७

नैगमनय किसको कहते हैं?

सूक्ष्माति सूक्ष्म रूपवाली इन्द्रियों के अगोचर जो हो चुकी है और होने वाली है उस क्रिया को प्रत्यक्ष रूप में मान लेना। जैसे भगवान महावीर स्वामी का निर्वाण हो चुका है, पर हम दीवाली के दिन कहते हैं, आज भगवान का निर्वाण दिन है। भगवान् पद्मनाभस्वामी जो अभी हुए नहीं,

होंगे, उनको तीर्थंकर मानकर हम नमुत्थुणं आदि करते हैं। सूक्ष्म रूप से होती हुई क्रिया को स्थूल रूप से मान लेना। जैसे कलकत्ता जाने की इच्छा से चलने वाले व्यक्ति को घर से बाहर निकलते ही घर वाले किसी के प्रश्न करने पर जवाब देते हैं- वह कलकत्ते गया। नैगमनय तीनों काल को प्रत्यक्ष करता है। निगम कहते हैं, निश्चित ज्ञान को और उससे होता हुआ वचन प्रयोग, नैगमनय कहलाता है।

संग्रह नय किसको कहते हैं

अलग अलग नामवाले अवयवों के या पदार्थों के संगृहीत-इकट्ठा हो जाने पर उन्ह समुदाय को एक वाक्य से व्यवहार करना संग्रह नय कहलाता है। जैसे सोती रेशम की दोरी रेशम का फूंदा आदि भिन्न चीजों को माला रूप में संगृहीत किया जाता है तब उन भिन्न नामों का वचन प्रयोग

नहीं होता। जैसे मेला जाती है मेला हुआ, बगीचा लगेगा, इत्यादि ये संग्रहनय के प्रयोग हैं। यह नय तीनों काल में व्यवहृत होता है।

व्यवहारनय किसको कहते हैं !

लोकमान्य अपने कर्म की सिद्धि के लिये, सत्य या असत्य वचन प्रवृत्ति का करना व्यवहारनय कहलाता है। जैसे कोई राहगीर किसी आदमी को पूछता है गाँव कितनी दूर है तब वह कहता है, कि गाँव तो यह आगया " यहाँ गाँव आगया कहना लोकमान्य व्यवहार है। वस्तुतः गाँव न आता है, न जाता है। ऐसे ही "पनाला गिरता है" गाय बाँध दो इत्यादि असत्य वचन प्रवृत्ति के उदाहरण हैं। जल बहता है, गाय जाती है, मैं प्रणाम करता हूँ, इत्यादि सत्य वचन प्रवृत्ति के उदाहरण हैं, सत्य या असत्य वचन प्रवृत्ति के उस व्यवहार को लोग अपने कार्य की सिद्धि तक ही मानते हैं, अतः वह न सच है न झूठ। यह नय भी तीनों काल को प्रयोग में लाता है।

ऋजुसूत्रनय किसको कहते हैं ?

भूत और भविष्यत् काल के अप्रस्तुत प्रयोग में उदासीनता रखने वाला और वर्तमान के ऋजु सरल सूत्र-सूचक का जो वचन प्रयोग करता है वह ऋजु सूत्र नय कहलाता है। जैसे कुम्हार मिट्टी लाता है गिली करता है, पिंडा लगाता है, चाक पर चढ़ाता है, तास चलता है, कोठी बनती है घड़ा पकता है, इत्यादि वर्तमान काल के सारे वचन प्रयोग ऋजुसूत्रनय के उदाहरण हैं। यह नय वर्तमान काल के ही विषय में लाता है।

शब्द नय किसको कहते हैं ?

पुल्लिंग के स्त्रीलिंग के नपुंसकलिंग के रूढ शब्दों का यौगिक शब्दों का और मिश्र शब्दों का

यथा स्थान एक-दो-तीन वचनों में प्रयोग करना शब्द नय कहलाता है। जैसे पुरुष आता है, मनुष्य गाते हैं, यहाँ शब्दनय पुरुष का एक होना सूचित करता है तो मनुष्यों का बहुत्व दिखलाता है। शब्द नय अपने २ यथोचित अलग का स्पर्श करता है। जैसे बालक-युवान-वृद्ध इन शब्दों से जूदे २ काल की सूचना मिलती है।

समभिरूढनय किसको कहते हैं?

पर्यायवाची नामों में सम्यक् प्रकारेण अर्थ को अभिरूढ स्थापित करके वचन प्रयोग का करना समभिरूढनय कहलाता है। जैसे जो जीतता है, जीतेगा, या जीत चूका है, उसे जिन कहना ठीक है। जो कामना पैदा करता है, करेगा, या कर चूका, उसे काम कहना ठीक है इत्यादि प्रकारेण संगत अर्थ वाले एक ही पदार्थ के भिन्न २ पर्यायों का भिन्न २ प्रयोग करना ये समभिरूढनय के उदाहरण हैं।

एवंभूतनय किसको कहते हैं !

एक पदार्थ के पर्यायवाची नाम एवं--जिस अर्थ में उसका प्रयोग किया गया है, उसी प्रकरण संगत अर्थ में भूत अर्थात् स्थित हो तब तो उसे ठीक मानना अन्यथा अनुपयोगी मानना एवंभूत नय कहलाता है। जैसे तीर्थ की स्थापना करते हों उसी समय तीर्थंकर शब्द का प्रयोग करना अन्य अवस्था में नहीं, सिद्ध अवस्था में मौजूद हो तभी सिद्ध शब्द का प्रयोग करना, अन्यत्र नहीं ऐसे एवंभूतनय के उदाहरण हैं।

नय किसको कहते हैं !

प्रत्येक पदार्थ में अनन्त धर्म--अवस्थायें रही हुई हैं। किसी एक धर्म अवस्था को लक्ष्य में रख-कर बाकी के धर्म-अवस्थाओं के प्रति उदासीनता

रखते हुए वस्तुस्वरूप प्रतिपादन करने वाले वाक्य प्रयोग को नय कहते हैं। जितने प्रकार से वचन प्रयोग किया जाय, उतने ही नय प्रयोग होते हैं। उनको संक्षेप से ऊपर लिखे सात भागों में बांट लिये जाने से सात ही कहे गये हैं।

सत्ताईसवें बोले निक्षेपा ४

नाम निक्षेपा १। स्थापना निक्षेपा २। द्रव्य निक्षेपा ३। भाव निक्षेपा ४।

नाम निक्षेपा किसको कहते हैं !

संसार में अनन्त पदार्थ हैं। उन के स्वरूप को जानने के लिये भिन्न २ नामों की कल्पना की जाती है। जैसे पशु जाति में से 'गाय' ऐसा नाम किसी पशु विशेष का नियत कर देने पर, अन्य पशुओं से भिन्न गो-पशु का बोध भली प्रकार हो जाता है; अपने २

व्यवहार के सुभीते के लिये किसी भी पदार्थ का कोई एक नाम रखना, नाम निक्षेपा कहलाता है। वस्तुस्वरूप का बोधक होने से यह नाम निक्षेपा सत्य है। इसके सत्यादि कई भेद होते हैं।

स्थापना निक्षेप किसे कहते हैं!

किसी भी पदार्थ का ज्ञान कराने के लिये उस पदार्थ की अपने ही में या किसी भी अन्य पदार्थ में स्थापना करना स्थापना निक्षेप कहलाता है। जैसे अरिहंत प्रभु को स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करने के लिये अरिहंत मूर्ति की स्थापना की जाती है। यह निक्षेपा भी वस्तु स्वरूप बोधक होने से सत्य है। इस के भी सत्यादि कई भेद होते हैं।

द्रव्य निक्षेपा किसे कहते हैं

जो पदार्थ उस रूपमें था, अथवा भविष्य

त्काल में होगा, वर्तमान में नहीं है) होगई और होनेवाली अवस्था का जो वर्तमान में आरोप करना है. उसे द्रव्य निक्षेपा कहते हैं। जैसे कोई व्यक्ति भूतकाल में साधु था। उसका स्वर्गवास होगया। स्वर्ग में साधुपना नहीं है। फिर भी उस व्यक्ति के शरीर का नाम का सन्मान सत्कार साधु मानकर किया जाता है यह द्रव्य निक्षेपे का उदाहरण है। यह निक्षेपा भी वस्तु स्वरूप बोधक होने से सत्य है। इस के भी आगम नोआगम से कई भेद होते हैं।

भावनिक्षेपा किसे कहते हैं ?

जिस किसी पदार्थ के कोई द्रव्य-गुण पर्याय को लक्ष्य में रखकर हम उसकी व्याख्या करना चाहते हैं। यदि वह पर्याय अवस्था हमारी व्याख्या के समय मौजूद हो तो वह पदार्थ का भाव निक्षेपा कहलाता है। यहां पदार्थ में जिस समय जो गुण मौजूद है, उस गुण को लेकर उस पदार्थ का भाव निक्षेपा माना गया है। जैसे किसी साधु महात्मा के साधु गुण मौजूद हैं, तो वह साधु का भाव

निक्षेपा है। ऐसे राजा मंत्री श्रावक आदि सारे संसार के उदाहरण समझने चाहिये। यह निक्षेपा वस्तु स्वरूप होने से सत्य है। इसके स्व-पर भाव को लेकर कई भेद होते हैं।

निक्षेप किसको कहते है

वस्तु स्वरूप को जानने के लिये उसकी भिन्न२ अवस्थाओं की कल्पना करना निक्षेपा कहलाता है। कल्पनायें कई प्रकार से की जा सकती हैं अतः निक्षेप भी कई हो सकते हैं। कम से कम किसी भी वस्तु के लिये चार कल्पनायें होती है तब उस वस्तु का ज्ञान भली प्रकार होता है। वे चार कल्पनायें ही ऊपर बताये चार निक्षेपा है।

अट्ठावीसवें बोले सम्यक्त्व ५

औपशमिक १ क्षायोग २ क्षायिक शमिक ३ वेदक ४ सास्वादन ५

औपशमिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

अनादिकाल से मिथ्यात्वी जीव नदी पषाण के न्याय-इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग जनित उदासीन परिणामों से आयुष्य को छोड़ बाकी के सात कर्मों की लम्बी स्थितियों की अकाम निर्जरा करते हुए, अन्तः कोटाकोटि सागर प्रमाणमात्र स्थिति को रखता है। इस स्वाभाविक प्रवृत्ति को यथाःप्रवृत्ति करण कहते हैं। उसके बाद पहले कभी नहीं हुई ऐसी राग-द्वेष की निबिड़ ग्रंथी के भेदन की क्रिया को करता है। इस अपूर्व क्रिया को अपूर्व करण कहते हैं। अनन्तर अंतःकोटा कोटि सागर की कर्म स्थिति से अधिक स्थिति वाले कर्मों को नहीं बांधता है। प्रस्तुत अवस्था से वापिस नहीं लौटने रूप इस क्रिया को अनिवृत्ति करण कहते हैं यहां जो कर्म आत्मा में लगे हुए होते हैं, उनको भव्य जीव अन्तर-करण के जरिये हटा कर अंतर्मुहूर्त मात्र काल तक परम शांति में आत्म रमण करता है। इस शांति के

समय सम्यकत्व मोहनीय-मिथ्यात्व मोहनीय मिश्रमोहनीय और अनन्तानुबंधी क्रोध मान-माया लोभ मोहनीय कर्म की इन ७ प्रकृतियों की उपशांति होती है। इस समय के आत्म परिणामों को "औपशामिक सम्यकत्व" कहते हैं। यह सम्यकत्व सारे संसार में अधिक से अधिक पांच-वार आता है। इसके अनुभव में आये बाद भव्य जीव अधिक से अधिक अर्ध पुद्गल परावर्त काल-तक ही संसार परिभ्रमण करता है बाद नियमा मोक्ष का अधिकारी होता है।

क्षायिक सम्यकत्व किसको कहते हैं।

मोहनीय कर्म की सात प्रकृतियों के सम्पूर्ण क्षय हो जाने पर आत्मा में जो परिणाम पैदा होता है उसे क्षायिक सम्यक्त्व कहते हैं। अधिक से अधिक तीसरे भव में क्षायिक सम्यक्त्ववाले जीव की सिद्धी होती ही है।

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

मोहनीय कर्म की सात प्रकृति—३ मोहनीय और अनन्तानुबंधी कषाय चौकड़ी-४ के जो दलिये उदय में आते हैं उन्हें क्षय कर दिया जाय, और जो उदय में नहीं आये उनको उपशमा दिये जाय इस परिणाम को क्षायोपशमिक सम्यक्त्व कहते हैं। जो उत्कृष्ट कुछ अधिक छासठ सागरोपम तक रहता है उसमें मोह कर्म का प्रदेशोदय होता है। सारे संसार में अनेक बार आता है, चला जाता है।

वेदक किसको कहते हैं

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के अंतिम अन्त-मुहूर्त्त के भाव को वेदक सम्यक्त्व कहते हैं।

सास्वादन किसको कहते हैं ?

उपशम सम्यक्त्व से गिरने के बाद ७-८ समयतक जो भाव रहता है उसे सास्वादन सम्यक्त्व कहते हैं। यह वापिस मिथ्यात्व में आने वाले जीव को होता है। खीर खाये बाद उल्टी हो जाय और उस समय जैसा बिगड़ा स्वाद होता है। ठीक वैसा यहां बिगड़े सम्यक्त्व का अनुभव होता है।

सम्यक्त्व किसको कहते हैं

जैसा वस्तु स्वरूप है, वैसी ही उस पर श्रद्धा रखना। शुद्ध देव-गुरु धर्म की श्रद्धा एवं सत्य की उपासना को सम्यक्त्व कहते हैं।

उनतीसवें बोले रस ९

काम की उत्तेजना बढ़ाने वाला परिणाम -शृङ्गार रस १। कायरता को मिटानेवाला और वीरता को बढ़ाने वाला परिणाम-वीर रस २। दया को पैदा करने वाला परिणाम-करुण रस ३। हंसी को पैदा करने वाला परिणाम–हास्य रस ४। मारकाट की भयंकरता वाला परिणाम-रौद्र रस ५। डर पैदा करने वाला परिणाम-भयानक रस ६। आश्चर्य पैदा करने वाला परिणाम-अद्भुत रस ७। घृणा पैदा करने वाला परिणाम-बीभत्स रस ८। प्रसन्नता एवं शान्ति को पैदा करने वाला परिणाम -शान्त रस ९। ये नव रस काव्य साहित्य में माने जाते हैं।

रस किसको कहते हैं

भिन्न २ अवस्थाओं में मन के भिन्न २ परिणामों को रस कहते हैं। जो कर्म प्रकृति के बंधन में लड्डू में चासनी के जैसे काम करता है।

तीसवें बोले अभक्ष्य २२

बड़ का फल - १ पींपल का फल - २ ऊंबर का फल - ३ पींपरी का फल - ४ कट्टूंबर का फल - ५ मधु-शहद - ६ मक्खन - ७ मांस - ८ मदिरा-शराब - ९ ओले-वर्षा के गड़े - १० विष-जहर - ११ बरफ - १२ कच्चा नमक आदि - १३ रात्री भोजन - १४ बहुत बीजवाले फल - १५ अनन्त काय - १६ अपरिमितकाल का बनाया हुआ आम आदि का अचार - १७ जिसकी दो दाल होती है ऐसे मूंग, उड़द, चने आदि कठोर धान्य को द्विदल कहते हैं, उसको विना गरम किये हुए दही के या छाछ आदि के साथ खाना - १८ वैंगन - १९ जिन फलों का नाम परिचित लोक प्रसिद्ध न हो ऐसे फल - २० तुच्छ फल पीलु, पीचू आदि - २१ जिनका रस चलित हो चुका है, ऐसे असन, पान, खादिम, स्वादिम चारों प्रकार के आहार - २२। ये बावीस अभक्ष्य हैं।

अभक्ष्य किसको कहते हैं?

जिन चीजों के खाने से तमो गुण की वृद्धि होती हो, हिंसा अधिक होती हो, भयंकर रोग मूर्च्छा मृत्यु आदि होने की संभावना होती हो, वे चीजें खाने योग्य न होने से अभक्ष्य कही जाती हैं।

इकत्तीसवें बोले अनुयोग ४

द्रव्यानुयोग १ गणितानुयोग २ चरणकरणानुयोग ३ धर्मकथानुयोग ४। ये चार अनुयोग हैं।

द्रव्यानुयोग किसको कहते हैं?

धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय काल इन छः द्रव्यों का वर्णन जिन ग्रन्थों में मिलता हो, वे ग्रन्थ द्रव्यानुयोग कहे जाते हैं। अथवा षड्द्रव्यों के विचार को द्रव्यानुयोग कहते हैं।

गणितानुयोग किसको कहते हैं ?

सूर्य-चंद्र आदि ग्रह नक्षत्रों की गति आदि के गणित ज्योतिष का वर्णन जिन ग्रन्थों में मिलता है। वे ग्रन्थ गणितानुयोग कहे जाते हैं। अथवा गणित के विचार को गणितानुयोग कहते हैं।

चरण करणानुयोग किसको कहते हैं ?

चरण कहते हैं निरन्तर आचरित क्रिया को महाव्रत आदिकों के पालन को। करण कहते हैं, नियत समय में कराती हुई क्रिया को प्रति लेखना आदि अनुष्ठान को। ऐसे चरण करण का वर्णन जिन ग्रन्थों में मिलता है वे चरण करणानुयोग कहे जाते हैं। अथवा चरण करण के अनुष्ठान को चरण करणानुयोग कहते हैं।

धर्मकथानुयोग किसे कहते हैं।

धर्म की भावना को बढ़ाने वाली कथाएँ जिन ग्रन्थों में मिलती हों, वे ग्रन्थ धर्म कथानुयोग कहे जाते हैं। अथवा धर्म कथा में मन को लगाना धर्म-कथानुयोग कहा जाता है।

अनुयोग किसको कहते हैं

सूत्र अर्थ के संबंधित व्याख्यान को, अथवा उस २ विषय में मन वचन काया के जोड़ने को अनुयोग कहते हैं।

बत्तीसवें बोले तत्त्व ३।

शुद्धदेव-१ शुद्धगुरु-२ शुद्धधर्म-३ ये तीन तत्त्व

हैं। राग द्वेष रहित होकर, लोकालोक के भाव को जानने वाले अनंत केवलज्ञान केवलदर्शन को पैदा करने वाले दिव्यात्मा अरिहंत और सिद्ध भगवान् ये शुद्धदेव हैं १ ॥ तत्त्वों को बताने वाले निष्पाप संयम मार्ग में चलने चलाने वाले, द्रव्य को नहीं रखने वाले, निष्पृही, महात्मा आचार्य-उपाध्याय साधु ये शुद्ध गुरु हैं २ अहिंसा संयम आदि सुविहितानुष्ठान रूप, दुर्गति में गिरते हुए प्राणी को धारण कर सुगति में पहूँचाने वाले आत्म परिणाम रूप दर्शन ज्ञान चरित्र और तप ये शुद्ध धर्म हैं ३॥

तत्त्व किसे कहते हैं?

सारभूत पदार्थों को और उनके दिव्य गुणों को तत्त्व कहते हैं।

तेतीसवें बोले समवाय ५।

कार्य सिद्धि में समय की जरूरत होती है

यह काल समवाय है । १। कार्य सिद्धि करने वाले कारणों में उस २ प्रकृति का होना ज़रूरी है, यह स्वभाव समवाय है । २ । कार्य सिद्धि का नियत निश्चय परिणाम होना जरूरी है यह नियती समवाय है। ३। कार्य सिद्धि में भूत काल के किये हुए कृत्यों का असर होता ही है यह पूर्व कृतकर्म समवाय है । ४ । कार्य सिद्धि में वर्तमान काल के प्रयत्न की जरूरत होती है यह उद्यम समवाय है।५। इन पांच समवायों के मिलने पर ही सब कार्यों की सिद्धि होती है ।

समवाय किसे कहते हैं ।

कार्य सिद्धि में भली प्रकार उपयोग में आने वाले कारणों को एवं उनके समुदाय को समवाय कहते हैं ।

चौतीसवें बोले पाखंडियों के ३६३ भेद

दुःख स्वयंकृत है अन्यकृत नहीं। ऐसी मान्यतावाले क्रियावादियों के १८० भेद होते हैं। अक्रिया की प्रधान मान्यतावाले अक्रियावादियों के ८४ भेद होते हैं। साधु-असाधु सत्य-असत्य दोनों को एक रूप मान कर विनय करना चाहिये ऐसी मान्यतावाले विनयवादियों के ३२ भेद होते हैं। सभी ज्ञान परस्पर में विरुद्धतावाले होते हैं। इसलिये अज्ञान ही श्रेयस्कर है। ऐसी मान्यतावाले अज्ञानवादियों के ६७ भेद होते हैं। इस प्रकार १८० - ८४ - ३२ - ६७ कुल ३६३ भेद होते हैं।

इनका सांगोपांग वर्णन श्री सुयगडांग सूत्र में एवं भगवती आदि सूत्रों में विस्तार से वर्णित है।

—:0:—

पैंतीसवें बोले श्रावक के २१ गुण

१. समुद्र की तरह गंभीर हो।
२. गृहस्थ जीवन पूर्णाङ्ग हो।
३. शांत स्वभावी हो।
४. सत्य मार्ग का अनुयायी हो।
५. शुद्ध हृदय हो।
६. इस लोक में अपवाद से, और परलोक में दुर्गति से डरने वाला हो।
७. लोगों को ठगनेवाला न हो।
८. साथियों की उचित इच्छा को पूर्ण करनेवाला हो।
९. नियमित जीवन रखता हो।
१०. दुखियों को दुःख से छुड़ाने की भावनारूप दया-अनुकम्पा को धारण करनेवाला हो।

११. पवित्र-सारग्राही-दृष्टिवाला हो।
१२. गुणी सज्जन गुरुजन महात्माओं का सम्मान करने वाला हो।
१३. नपे तुले शब्दों में सच्ची बात को कहने वाला हो।
१४. धार्मिक सम्बन्धियोंवाला हो।
१५. दीर्घ दृष्टि से सोचनेवाला हो।
१६. पक्षपात रहित; मध्यस्थ वृत्तिवाला हो।
१७. गुणी महात्माओं के सत्संग को चाहनेवाला हो।
१८. विनयी हो।
१९. किये हुए उपकार न भूलनेवाला, अकृतघ्न हो।
२०. स्वार्थ रहित वृत्ति से यथाशक्ति उपकार करनेवाला हो।
२१. धार्मिक एवं व्यवहारिक क्रिया में दक्ष हो।

समाप्त

३५ बोल के प्रश्नोत्तर

ाधु महाराज

गृहस्थ श्रावक

चे लिखे जाते हैं। इसी प्रकार

त्तर हो सकते हैं। पाठक स्वयं

गति में हो ?

ते में।

जाति के हो ?

ाति का।

स्थावर दो में से क्या हो ?

नी इंद्रियां हैं ?

हैं ?

सि कितनी हैं ?

ां।

प्र० तुममें कितने प्राण हैं ?

उ० १० प्राण।

प्र० तुम्हारे शरीर कितने हैं ?

उ० मुख्य १– औदारिक, गौण २– तैजस और कार्मण, कुल तीन हैं।

प्र० तुममें योग कितने हैं ?

उ० ४ मनके, ४ वचनके, १ काया का इस प्रकार कुल योग ९ हैं।

प्र० तुममें उपयोग कितने हैं ?

उ० मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, चक्षुदर्शन, और अचक्षु-दर्शन ऐसे ४ उपयोग हैं।

प्र० तुम्हारी आत्मा से कितने कर्मों का सम्बन्ध है ?

उ० आठों ही कर्मों का।

प्र० तुममें कौनसा गुणस्थानक है ?

उ० पांचवां देशविरति गुणस्थानक।

प्र० जीव के १४ भेदों में से तुम्हारा कौनसा भेद है ?

उ० चौदहवां सञ्ज्ञीपञ्चेन्द्रिय पर्याप्त का।

प्र० तुममें आत्मा कितनी मिल सकती हैं ?

उ० यथासम्भव आठ आत्मा।

प्र० तुम किस दंडक में हो ?

उ० २१वें मनुष्य के दण्डक में।

प्र० तुममें लेश्याएं कितनी होती हैं ?

उ० द्रव्य लेश्या ६, और भावलेश्या पीछे की ३।

प्र० तुममें दृष्टि कौनसी है ?

उ० सम्यग् दृष्टि।

प्र० तुमसे कितने ध्यान हो सकते हैं ?

उ० शुक्ल ध्यान को छोड़कर बाकी के ३।

प्र० छः द्रव्यों में तुम कौन हो ?

उ० जीव द्रव्य।

प्र० तुम किस राशि के हो ?

उ० जीव राशि के।

प्र० तुम्हारे व्रत कितने हैं ?

उ० ५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत कुल १२।

प्र० तुम्हारे गुरु कौन हो सकते हैं ?

उ० पंच महाव्रत धारी, भिक्षामात्र से गोचरी करनेवाले, निष्पाप आचार का पालन करने वाले, और तत्त्वों को कहनेवाले ही हमारे

गुरू हो सकते हैं।

प्र० व्रत के ४६ भांगों में से तुम किस भांगे के अधिकारी हो?

उ० जिस कोटि का व्रत लिया जाय उसी भांगे का।

प्र० तुममें कौनसा चरित्र मिल सकता है।

उ० सामायिक चरित्र।

प्र० नय किसे कहते हैं?

उ० वस्तु स्वरूप को अंशरूप से प्रतिपादन करने वाले बोलने के तरीके को नय कहते हैं।

प्र० निक्षेप किसको कहते हैं?

उ० वस्तु स्वरूप का पूर्ण ज्ञान करानेवाली वस्तु की अवस्थाओं का भिन्न २ रूप से निर्द्धारण करने को निक्षेप कहते हैं।

प्र० सम्यक्त्व किसे कहते हैं?

उ० राग द्वेष रहित–वीतराग–सर्वज्ञ–तीर्थंकर भगवान के फरमाये हुए तत्वों को जैसे हैं, उनको ठीक वैसे ही मानना। सत्य को सत्य और असत्य को असत्य। यही सम्यकत्व है।

प्र० नवरस क्या हैं?

उ० नव प्रकार के मानसिक परिणामों को नव रस कहते हैं।

प्र० अभक्ष्य किसे कहते हैं ?

उ० न खाने योग्य चीजों को अभक्ष्य कहते हैं।

प्र० अनुयोग किसे कहते हैं ?

उ० जैन आगमों के व्याख्यान को अनुयोग कहते हैं ?

प्र० तीन तत्त्व कौनसे हैं ?

उ० शुद्धदेव, शुद्धगुरु और शुद्धधर्म ये तीनों तत्त्व हैं।

प्र० पांच समवाय क्यों मानने चाहिये ?

उ० कार्यसिद्धि पांच समवाय-कारणों से ही होती है, अतः उनको मानने चाहिये।

प्र० पाखंडी किसे कहते हैं ?

उ० जिनके आचार विचार में यथार्थता नहीं है उन्हें पाखंडी कहते।

प्र० २१ गुणों से क्या सिद्धि होती है ?

उ० २१ गुणों की दिव्य भूमि में धर्म का बीज साङ्गोपाङ्ग अङ्कुरित होता है, और विक-

सित हो जाने पर, स्वर्ग और मोक्ष के अनुपम सुखफलों की सिद्धि होती है।

नोट:- इन प्रश्नोत्तरों के जैसे ही प्रश्नोत्तर अपनी विवेक बुद्धि से पैदा करके चिंतन मनन और निदिध्यासन करने से आत्मकल्याण होता है।

गच्छतः स्खलनं क्वापि,
भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र,
समादधति साधवः ॥ १ ॥

महामंत्र की धुन

ॐ अर्हं जय हे महावीर,
शासननायक गुण गंभीर।
त्रिशला नंदन श्री महावीर,
ॐ अर्हं जय हे महावीर ॥

इस महामंत्र की धुन भव्यात्माओं को हमेशा लगानी चाहिये।

ॐ शान्ति ॐ शान्ति

प्रातःस्मरणीय पूज्येश्वर आचार्य देव का
चरणोपासक—
मुनि कांतिसागर